ाई - सितंबर 1993 वर्ष : 25 अंक 3

वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के सौजन्य से प्रकाशित

लेसर प्रेरित संलयन

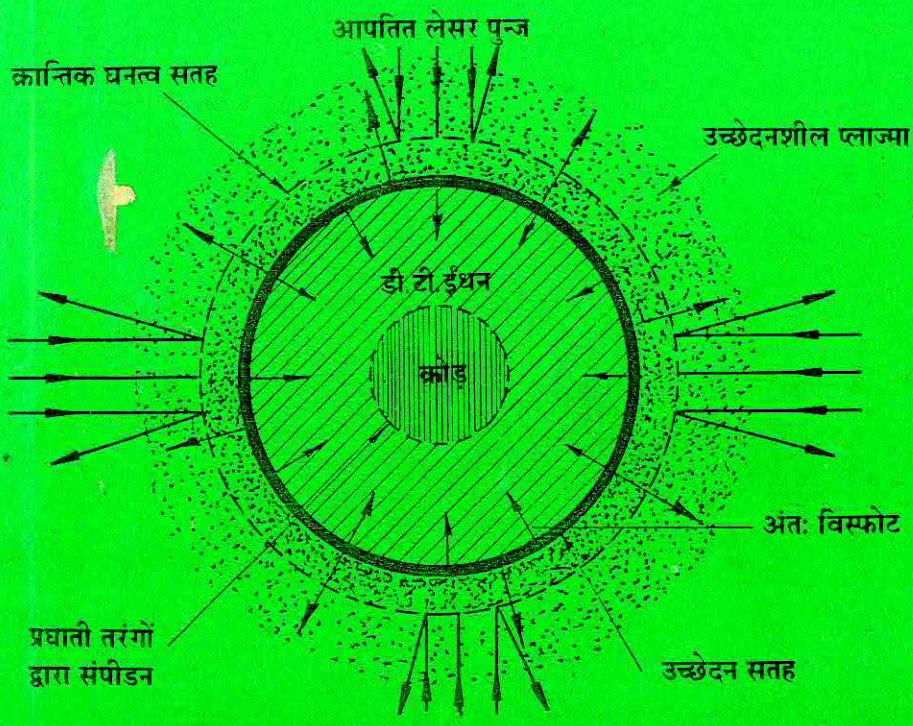

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद

हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन व प्रचार प्रसार हेतु परिषद नियमित रूप से त्रैमासिक पत्रिका **वैज्ञानिक** का प्रकाशन, विज्ञ गोष्ठियों, वार्ताओं एवं अखिल भारतीय लेख प्रतियोगिता का आयोजन करती है।

परिषद की सदस्यता एवं वैज्ञानिक पत्रिका का शुल्क (रु) :

	परिषद सदस्यता			वैज्ञानिक शुल्क 5 रु. प्रति	
	एक वर्ष	आजीवन	प्रवेश शुल्क	एक वर्ष	तीन वर्ष
व्यक्तिगत	15	100	1	15	40
संस्थागत	25	250	1	25	70

1. वैज्ञानिक विशेषांकों का मूल्य अलग से निर्धारित होगा।
2. वर्तमान नियमानुसार परिषद के सदस्यों को वैज्ञानिक नि:शल्क भेजी जाती है।
3. सभी शुल्क हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद के नाम से डिमांड ड्राफ्ट (बम्बई) अथवा भारतीय पोस्ट आर्डर द्वारा ही भे कृपया बम्बई से बाहर के चैक व मनीऑर्डर द्वारा शुल्क न भेजें।

'वैज्ञानिक' में विज्ञापन

हिन्दी में प्रकाशित होने वाली विज्ञान पत्रिकाओं में वैज्ञानिक अग्रणी है। देश के सभी मुख्य वैज्ञानिक संस्थान इसके ग्राहक हैं। इस पत्रिका में आपके विज्ञापन आमंत्रित हैं। पूरे पृष्ठ की छपाई का आकार 16 सें.मी.× 21 सें.मी. है।

विज्ञापन की दरें	:	(एक प्रति के लिए)
अंतिम आवरण	:	रु. 2,500/-
दूसरा/तीसरा आवरण (अंदर)	:	रु. 2,000/-
पूरा पृष्ठ	:	रु. 1,500/-
आधा पृष्ठ	:	रु. 800/-

अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता - 1993

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा.प.अ.केंद्र) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित हि विज्ञान लेख प्रतियोगिता हेतु प्रविष्टियां आमंत्रित हैं। लेख में किसी भी वैज्ञानिक विषय पर आधुनिक जानकारी होनी चाहि दो टंकित अथवा स्पष्ट लिखित प्रतियां (लगभग 3000 शब्द) वैज्ञानिक कार्यालय को भेजें। चित्रों को सफेद कागज पर का रोशनाई से बनाएं और लेख के अंत में संलग्न कर दें।

पुरस्कार : प्रथम रु. 1500/-, द्वितीय रु. 1000/-, तृतीय रु. 500/-

इसके अतिरिक्त पांच प्रोत्साहन पुरस्कार व अहिंदी भाषी प्रतियोगियों के लिए दो विशेष पुरस्कार - प्रत्येक रु. 300/- दिये जायेंगे। अत: अपनी मातृभाषा का स्पष्ट उल्लेख करें।

अंतिम तिथि : 31 अगस्त 1993

विशेष : पुरस्कृत रचनाएं वैज्ञानिक की संपत्ति होंगी। वैज्ञानिक से संबंधित अधिकारी इस प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकें

पत्राचार का पता : श्री. ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी, सचिव, हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद, परमाणु ईंधन प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ट्राम्बे, बम्बई - 400 085

अ नु क्र म णि का

वैज्ञानिक

र्ष 25 अंक 3

जुलाई - सितम्बर 1993

व्यवस्थापन मंडल

डॉ. शिव प्रकाश गर्ग

श्री ज्ञानोत्तमलाल गोस्वामी

श्री ललित कुमार

श्री राम निवास आर्य

श्री इंद्र कुमार शर्मा

श्री दीप प्रकाश

संपादन मंडल

डॉ. जनार्दन स्वरुप

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला

डॉ. दुर्गा प्रसाद पांडेय

श्री हरि ओम मित्तल

शुल्क

भारत में

	संस्थागत	व्यक्तिगत
क वर्ष	25रु.	15रु.
ोन वर्ष	70रु.	40रु.

विदेश में

(समुद्री डाक द्वारा प्रेषण)

	संस्थागत	व्यक्तिगत
क वर्ष	45रु.	35रु.
ोन वर्ष	125रु.	95रु.

एक प्रति — 5 रु.

पृष्ठ संख्या

संपादकीय 3

लेख

1. लेसर प्रेरित संलयन : भविष्य का ऊर्जा स्त्रोत 5
   - जगदीश चन्द्र मोंगा
2. कम्प्यूटर की सहायता से भारतीय भाषाओं में अधिगम शिक्षण 10
   - डॉ. रेखा गोविल
3. भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन में उपग्रह प्रमोचन वाहनों का विकास 14
   - डॉ. सुरेश चन्द्र गुप्ता
4. किशोर अवस्था की आवश्यकताएं एवं समस्याएं 23
   -श्रीमती कालिन्दी मुजुमदार
5. कैसी है शोर की विडम्बना 27
   - डॉ. डी. डी. ओझा
6. इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाएं 30
   - डॉ. अविनाश सप्रे
7. जीवन क्रियाओं का नियंत्रण : विपर्यायी प्रोटीन फासफोरिलेशन 34
   - डॉ. श्रीकुमार आपटे

टिप्पणियां 38

1. गुत्थी सिरदर्द की
   - नरविजय सिंह यादव
2. वीडियो कैमरा - एक अवलोकन
   - डॉ. बालगोविन्द जायसवाल
3. पर्वतों को जड़ें होती हैं.?
   - डॉ. रामकृष्ण चौधरी
4. मीथेन और ग्रीन हाऊस प्रभाव
   - डॉ. गोपाल भारद्वाज

- 'वैज्ञानिक' में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से संपादन मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
- 'वैज्ञानिक' में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हि.वि.सा. परिषद के पास सुरक्षित है।
- 'वैज्ञानिक' एवं हि.वि.सा. परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय बम्बई के न्यायालय में ही होगा।

कार्यालय :
'वैज्ञानिक' हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेन्ट्रल काम्प्लेक्स,
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र,
बम्बई - 400 085.

शुल्क भेजने का पता :
श्री. ललित कुमार
कोषाध्यक्ष,
हि. वि. सा. प., धात्विकी प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र
बम्बई - 400 085.

'वैज्ञानिक' का शुल्क

पाठकों से अनुरोध है कि यदि उनका 'वैज्ञानिक' का शुल्क समाप्त हो गया हो, तो उसे भेज कर इसका नवीनीकरण करा लें। 'वैज्ञानिक' के लिफाफे पर शुल्क सम्बन्धी जानकारी दी जाती है। यदि सम्भव हो तो आजीवन सदस्य बन जाएं।

- संपादक

बाल विज्ञान (विज्ञान नाटक)
परमाणु की आंतरिक दुनिया
- डॉ. सत्य नारायण त्रिपाठी

विज्ञान समाचार
- भापअ केन्द्र में
- अन्य समाचार

संगोष्ठी समाचार
- मानव स्वास्थ्य के कुछ आयाम
- पशु - चिकित्सा विज्ञान की प्रगति में मुक्तेश्वर परिसर का योगदान

कुछ फूल : कुछ कांटे

संकलन
- "वैज्ञानिक" में प्रकाशित लेखों की अनुक्रमणिका

अन्य :
- समीक्षा
- विज्ञान कविता
- हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की कार्यकारिणी समिति का चुनाव परिणाम
- सदस्यता आवेदन पत्र का प्रारुप

संपादकीय

स्वदेशी तकनीक का राष्ट्रीय विकास में महत्व

"वैज्ञानिक" के अप्रैल-जून 1992 के अंक (24:2) के संपादकीय में देश की प्रगति के लिए तकनीकी संस्कृति के विकास पर प्रकाश डाला गया था जिसकी एक महत्वपूर्ण कड़ी है स्वदेशी तकनीक यानी स्थानीय परिस्थितियों एवं क्षमताओं के अनुकूल तैयार की गयी तकनीक। इसका सबसे अहम पहलू इस राष्ट्र की मौलिक एवं अभिनव क्षमताओं को बढ़ावा मिलना है। इन तकनीकों को अपनाने तथा इन्हें उच्च स्तर तक पहुँचाने में सरलता रहती है क्योंकि इनका मूलाधार स्थानीय होता है। आवश्यक घटक, पदार्थ, पर्यावरणीय परिस्थितियां इत्यादि सहज रुप से उपलब्ध होने के साथ-साथ इनका रखरखाव भी आसान तथा आर्थिक दृष्टि से व्यवहार्य होता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि विज्ञानियों तथा प्रौद्योगविदों के मध्य कार्य करने के स्तर पर आपस में गम्भीर एवं स्वस्थ विचार विमर्श तथा तालमेल हो।

किसी भी राष्ट्र के लिए यह आवश्यक है कि वह स्वदेशी तथा आयातित तकनीकों के बीच एक ऐसा संतुलन स्थापित करे ताकि स्वदेशी तकनीकों/यंत्रों को लगातार अधिक से अधिक प्रोत्साहन मिले। विकसित देशों से आयातित उच्च स्तरीय तकनीकों को बिना समुचित प्रशिक्षण एवं औद्योगिक अवरचना के अपनाने से विकासशील देशों में तकनीकी पराधीनता पनपती है। फलस्वरुप समस्याओं के क्रांतिक (नाजुक) समय पर हमें उन विकसित राष्ट्रों की ओर देखना पड़ता है। तब वे अपने मनमाने तौर से व्यवहार करते है। हाल ही में बहुचर्चित क्रायोजनिक बूस्टर इंजिन की तकनीकी हस्तांतरण का उदाहरण लेते हैं। भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम हेतु क्रायोजनिक बूस्टर इंजिनों की तकनीकी हस्तांतरण के लिए सन् 1990 में रुस के साथ एक समझौता हुआ था। इन बूस्टर इंजिनों में द्रव हाइड्रोजन (लगभग 20° के.) को ईंधन के रुप में प्रयुक्त किया जाता है और यह कार्य विशेष निम्नतापकी (क्रायोजनिक) तकनीक से ही संभव है। परन्तु अमरीका और रुस के बीच हुए हाल के समझौते के तहत रुस अब इस तकनीक को हमे देने में असमर्थ है। इससे राष्ट्रीय परियोजना की प्रगति में गतिरोध उत्पन्न होना स्वाभाविक है। यदि यह तकनीक इस समय मिल भी जाती है तो भी इसे कोई अच्छी सफलता नही कहा जा सकता है क्योंकि अभी नही तो कुछ समय बाद दाता राष्ट्र की अपनी स्थानीय परिस्थितियों तथा विदेशी अंकुशों के कारण फिर हमें किसी अन्य नाजुक स्थिति पर अटकना पड़ सकता है । ऐसी स्थितियां देश में समय समय पर आती रही है एवं भविष्य में आने की सम्भावनाएं भी रहेंगी। अत: उचित तो यही होगा कि इस दिशा चल रहे स्वदेशी प्रयासों को और अधिक बल एवं प्रमुखता दी जाये। साथ ही सुविचारित तौर पर केवल उन स्वदेशी तकनीकों को विकसित करने हेतु जोर दिया जाय जिनका राष्ट्रीय हित से संबंध हो। यह उल्लेखनीय है कि हमारे देश के LPSC त्रिवेंन्द्रम में स्वदेशी तौर पर क्रायोजनिक इंजिन बनाने की परियोजना प्रगति पर है। वैज्ञानिकों के अनुसार इसमें सबसे बड़ी दिक्कत ईंधन को फ्रीजिंग ताप पर उच्च गति (टरबो फीडिंग) से भरने में आएगी। जिसके लिए विशेष एलॉय तथा पदार्थों का विकास भी जरुरी हो गया है ('वैज्ञानिक' 24:2, 1992 पृष्ठ - 3)

इस सन्दर्भ में यह कहना असंगत न होगा कि हमारे देश में उच्च कोटि के वैज्ञानिको, इंजीनियरों तथा प्रौद्योगविदों की कमी नही है। आवश्यकता है तो केवल उनकी प्रतिभा को पहचानने तथा उन्हें समुचित प्रोत्साहन एवं साधन उपलब्ध कराने की। ये वैज्ञानिक - इंजीनियर विदेशों में अपनी प्रतिभा, लगन, मेहनत के द्वारा उच्च कोटि का कार्य कर दिखाते है जिनका लाभ दूसरे राष्ट्रों को मिलता है तो अपने देश में क्यों नहीं ?

आज के युग में जब सूचना संचार के क्षेत्र में अद्‌भुत प्रगति हो चुकी है, दूरदर्शन एवं अन्य संचार माध्यमों से संसार मे हो रहे विकास कार्यों की झलक मिल जाती है, तो जिज्ञासु मन में उन्हें हासिल करने अथवा कम से कम देखने की एक अभिलाषा जागृत होती है। अत: वह विदेश जाने के लिए प्रयत्नशील हो जाता है। यह स्वाभाविक है और होना भी चाहिए। परंतु देखना यह है कि राष्ट्रीय हित में हर वैज्ञानिक व प्रौद्योगविद के अंत:करण में यह भावना प्रबल रहे कि

वह किस प्रकार विकसित राष्ट्रों में चल रही दक्ष प्रणालियों को अपने स्थानीय सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिवेश में यथावश्यक परिवर्तन के साथ अपना सके। बात तो सिर्फ मूल विचार को समझने की है न कि तकनीक या मशीन को ज्यों का त्यों आयातित करने की। इस संदर्भ में एक अहम पहलू जिम्मेदारी और उत्तरदायित्वता का आता है। जब भी किसी वैज्ञानिक या इंजीनियर को किसी तकनीक विशेष को सीखने / देखने के लिए विकसित राष्ट्र में भेजा जाता है तो यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि वापसी पर वह उस कार्य पर पूर्णतया जुट जाय। इससे पहले यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि अमुक कार्यक्रम राष्ट्रीय हित में है तथा इसकी पूर्णता के लिए समग्रता से विचार कर लिया गया है। क्या अन्य आवश्यक साधन / अवरचना उपलब्ध है। यहाँ पर वैज्ञानिक प्रबंधको / परियोजना अधिकारियों की जिम्मेदारी और भी अधिक है। उन्हें ऐसा वातावरण एवं प्रोत्साहन वैज्ञानिकों को देना है कि वह अर्जित ज्ञान का लाभ स्वदेश को दे सके न कि कुछ समय बाद हतोत्साहित (फ्रस्टेट) होकर विदेश भागने के लिए लालायित होने लगे। उपलब्ध मानव शक्ति एवं अन्य संसाधनों के उपयोग में एक स्वार्थरहित दृष्टिकोण अपनाया जाये। परियोजनाओं की संख्याओं के स्थान पर उनकी उपादेयता पर अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।

यह सही नही है कि विदेश में हर चीज अच्छी है, हर परिस्थिति अनुकूल है। वहां भी वैज्ञानिकों / प्रौद्योगविदों को यदा कदा अत्यधिक मानसिक तनाव एवं अभावों में कार्य करना पड़ता है। ऐसे वैज्ञानिक अवश्य चाहेंगे कि यदि उन्हें अपने देश में थोड़ा सा भी प्रोत्साहन मिले तथा साधन उपलब्ध करा दिये जांय तो वे अपनी पूर्ण क्षमता एवं दक्षता न्यौछावर करने को सहर्ष तैयार होंगे। यह संभव हो पाएगा हमारी सकारात्मक मानसिकता तथा राष्ट्रीय प्रगति की इच्छा शक्ति एवं अनुकूल वातावरण द्वारा। हम अपने ही महाद्वीप के जापान, चीन, कोरिया जैसे राष्ट्रों का उदाहरण ले सकते है जिन्होंने तकनीकी तौर पर उल्लेखनीय प्रगति कर दिखाई है। जापान के लोगों की राष्ट्र के प्रति निष्ठा की सभी उन्नत राष्ट्र सराहना करते है।

स्वदेशी तकनीक के विकास में अवरोध पैदा करने वाली एक बात जो स्पष्ट होती है वह है विदेश जाने की अभिलाषा। यह देखा गया है कि साधारणतः हर क्षेत्र में ऐसे कार्यक्रम या प्रोजेक्ट लेने का प्रयास किया जाता है जिसका संबंध किसी न किसी उन्नत राष्ट्र के कार्यक्रम से हो। इसमें निहित मानसिकता का आधार यह होता है कि इन कार्यक्रमों में विदेश जाने के मौके अधिक होंगे। और उन लोगों को, जो स्वदेशी तौर पर कोई यंत्र या मशीन के विकास में लगे होते है, यह कह कर कि 'इसमें क्या है?' अलग छोड़ देते है। वस्तुतः ये स्वदेश प्रेमी वैज्ञानिकों के प्रयास ही राष्ट्रीय हित को दूर तक ले जाते है। इन्हें ही स्वदेशी तकनीक के विकास के स्तम्भ कह सकते है। जब सर सी. वी. रमन अपने देश में कार्य करते हुए स्वदेशी उपकरणों का उपयोग कर अपनी प्रखर बुद्धिमत्ता से नोबेल पुरस्कार के स्तर का कार्य कर सकते है तो क्या उच्च स्तरीय तकनीक का स्वदेशी तौर परं विकास नही हो सकता? इसके लिए आवश्यक है उत्कृष्ट बुद्धिमत्ता, लगन एवं राष्ट्रीय प्रेम की भावना और इन सबके साथ जरुरी है स्वार्थ परत मानसिकता में बदलाव।

● ● ● ●

प्रस्तुत अंक वर्ष 1993 का जुलाई - सितंबर अंक है जिसमें मिली जुली सामग्री संजोयी गयी है। लेखों के अतिरिक्त विज्ञान नाटक, एवं कविता का समावेश है। पाठकों की सुविधा हेतु वर्ष 1980 के अंको में 1969 से "वैज्ञानिक" में छपे लेखों की अनुक्रमणिका दी गयी थी। इस अंक से हम अक्टु - दिसं. 1980 के बाद के लेखों की सूची प्रकाशित करने जा रहे है। आशा है ये अनुक्रमणिकाएं पाठकों को "वैज्ञानिक" में प्रकाशित लेखों की जानकारी देने के साथ साथ नये लेखों के लिए सूचना स्त्रोत का कार्य भी करेंगी। इस अंक के बारे में पाठकों की प्रतिक्रियाएं अपेक्षित हैं।

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठिया

लेसर प्रेरित संलयन : भविष्य का ऊर्जा स्रोत

डॉ. जगदीश चन्द्र मोंगा
लेसर एंव प्लाज्मा प्रौद्योगिकी प्रभाग
भाभा परमाणु अणुसंधान केन्द्र, बम्बई 400 085

किसी भी कार्य को संपन्न करने के लिए आवश्यक तत्व यानी ऊर्जा की बढ़ती हुई मांग को मद्देनजर रखते हुए भविष्य की ऊर्जा पूर्ति हेतु नये स्रोतों की खोज पर निरंतर वैज्ञानिक काम हो रहे हैं। लेसर प्रेरित संलयन द्वारा ऊर्जा को हासिल करने की दिशा में व्यवहारिक तौर पर हो रहे प्रयासों की अपनी ही एक कहानी है।इस पद्धति द्वारा किस प्रकार ऊर्जा प्राप्त होती है, तथा इसकी क्या क्या समस्याएं हैं इत्यादि पहलुओं की विवेचना इस लेख में की गयी है।

मानव जाति के लिए ऊर्जा का जो महत्व है उसके लिए किसी विशेष भूमिका की आवश्यकता नहीं है। हम सभी इस तथ्य से परिचित हैं कि जीवाश्म ईंधन जैसे कोयला, खनिज, तेल तथा प्राकृतिक गैस इत्यादि हमें अधिक समय तक ऊर्जा प्रदान नही कर सकते, इनसे प्राप्त होने वाली ऊर्जा के भंडार सीमित हैं।परन्तु औद्योगिक सभ्यता के विकास तथा जनसंख्या विस्फोट के कारण पूरे विश्व भर में ऊर्जा की खपत तथा मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है। खनिज तेल की आपूर्ति के साथ भू-राजनैतिक पहलू भी जुड़े हुए हैं।तथा इनके द्वारा उत्पन्न हुए ऊर्जा संकट की पीड़ा को संभवत: प्रत्येक व्यक्ति अनुभव कर रहा है। इस परिपेक्ष्य में ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों का विकास अति आवश्यक हो जाता है।संलयन ऊर्जा भविष्य में एक असीमित प्रदूषण रहित तथा आर्थिक दृष्टि से सस्ता ऊर्जा स्रोत सिध्द हो सकता है। इस लेख में हम संलयन ऊर्जा से संबधित विभिन्न पहलुओं पर विचार करेंगें। मुख्यता संलयन ऊर्जा क्या है ? इसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है ? इसके लिए किन परिस्थितियों की आवश्यकता होती है ? लेसर प्रेरित संलयन के लिए उपयुक्त लेसर के क्या गुणधर्म होने चाहिए? तथा संलयन रिऐक्टर के लिए "चालक लेसर" की होड़ में कौन से लेसर हैं तथा उनकी स्थिति क्या है? इन्ही कुछ प्रश्नों पर यहां विचार किया गया है।

संलयन ऊर्जा क्या है ?

संलयन ऊर्जा नाभिकीय ऊर्जा का ही एक स्वरूप हैं । इस प्रकिया में दो हल्के नाभिक जैसे ड्युटीरियम तथा ट्रिशियम आपस मे विलीन हो कर एक मध्यम भारी नाभिक का निर्माण करते हैं तथा उनके आपसी भार के अतंर के अनुपात में ऊर्जा का उत्सर्जन होता है । सूर्य की असीमित ऊर्जा का स्रोत उसके गर्भ में चल रही यह संलयन अभिक्रियाएं ही हैं, कुछ महत्वपूर्ण संलयन अभिक्रियाएं निम्नलिखित हैं :

अ) ड्युटीरीयम-ट्रिशियम चक्र

ड्युटीरियम + ट्रिशियम → अल्फा कण (3.5 एमईवी) + न्यूट्रॉन (14.1एमईवी)

(1एमईवी = 10^6 इलेक्ट्रॉन वोल्ट)

न्यूट्रॉन + लिथियम → अल्फा कण (2.0 एमईवी) + ट्रिशियम (2.6एमईवी)

तापअवसीमा = 4 केईवी (4×10^3 इलेक्ट्रॉन वोल्ट)

ब) ड्युटीरीयम - ड्युटीरीयम चक्र

ड्युटीरीयम + ड्युटीरीयम → ट्रिशियम (1.0एमईवी) + प्रोटॉन (3.0 एमईवी)

ड्युटीरीयम + ड्युटीरीयम → हिलियम^3 (0.92 एमईवी) + न्यूट्रॉन (2.4 एमईवी)

ताप अवसीमा = 50केईवी

स) ड्युटीरीयम - हिलियम^3 चक्र

ड्युटीरीयम + हिलियम^3 → अल्फा कण (3.7 एमईवी) + प्रोटॉन (14.7एमईवी)

ताप अवसीमा = 100 केईवी

उच्च ताप की आवश्यकता :

इन अभिक्रियाओं में से डी + टी अभिक्रिया में सबसे अधिक ऊर्जा की उत्पत्ति होती है। तथा इसके लिए अधिकांश प्रयोग इन्हीं तत्वों को लेकर किए जा रहे हैं। इन अभिक्रियाओं के लिए एक निश्चित तापमान की आवश्यकता होती है जिसे हम ताप अवसीमा कहते हैं। संलयन अभिक्रिया में भाग लेने वाले घटकों का ताप इस अवसीमा से अधिक होना चाहिए। यह सीमा नाभिकीय अन्योन्य क्रियाओंसे संबधित ऊर्जा विज्ञान से उत्पन्न होती है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि यह दोनों नाभिक न्यूक्लीय बल के प्रभाव से ही एक दूसरे में विलीन हो सकते हैं जिसके लिए इन्हें न्यूक्लीय परास तक पास लाना आवश्यक है (2×10^{-13} से.मी.) जोकि नाभिक के अर्धव्यास के बराबर है परन्तु धन आवेशीय नाभिकों को जैसे ही पास लाने का प्रयत्न किया जाए तो विद्युतीय विकर्षण के कारण वह एक दूसरे को दूर धकेलते है। इसलिए यह आवश्यक है कि इन नाभिकों की गतिज ऊर्जा को इतना बढाया जाए कि यह विद्युतीय विकर्षण को पार करके न्यूक्लीय परास तक नजदीक आ सकें तथा न्यूक्लीय बल के प्रभाव में आपस मे विलीन हो सकें जिससे सलंयन ऊर्जा की प्राप्ति हो सकें। डी + डी चक्र के लिए यह ताप अवसीमा 4 केईवी तक है जो ऊपर दर्शायी महत्वपूर्ण अभिक्रियाओं में से सबसे कम है। इसलिए संलयन ऊर्जा प्राप्त करने के प्रयास इन्हीं अभिक्रियाओं पर आधारित है। संलयन ऊर्जा में हल्के नाभिक लेने का यह एक महत्वपूर्ण कारण इन नाभिकों में एक ही प्रोटॉन होना है जिसका आवेश एक इकाई है यह कम आवेश आपसी विद्युतीय विकर्षण को कम रखता है जिसके फलस्वरुप इन्हें कम गतिज ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है।

परिसीमन की आवश्यकता :

इतने अधिक ताप पर गर्म करने के पश्चात कोई भी पदार्थ प्लाज्मा में परिवर्तित हो जाता है जो कि पदार्थ की चतुर्थ अवस्था है (ठोस, तेल, गैस तथा प्लाज्मा)। प्लाज्मा एक प्रकार का इलेक्ट्रॉनों तथा आयनों का समूह है। प्लाज्मा प्रसारत होने के कारण फैलता है तथा इसके फलस्वरूप ठंडा होता है इसलिए यह आवश्यक है कि यदि हम ईंधन को एक निश्चित अवधि के लिए गर्म रखना चाहते हैं जिसमें उपयुक्त मात्रा में संलयन अभिक्रियाएं हो सकें तो इस प्रसार प्लाज्मा का परिसीमन (कनफाईनमैंट) करना पड़ेगा। प्लाज्मा परिसीमन के लिए मुख्य रूप से दो प्रणालियां हैं।

चुम्बकीय परिसीमन (मैग्नैटिक कनफाईनमैंट) में चुम्बकीय क्षेत्र के प्रयोग से प्लाज्मा का पीरसीमन किया जाता है। चुम्बकीय क्षेत्र में आवेशित कण अपने वेग तथा चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता के आधार पर एक विशेष प्रकार का बल अनुभव करते हैं जो इन कणों को चुम्बकीय बल की रेखाओं से बांध सा देता है तथा इस प्रकार आवेशित कणों के फैलाव को रोका जा सकता है। चुम्बकीय बोतल, टोकामाक, स्टैलेरेटर इत्यादि संयंत्र चुम्बकीय परिसीमन प्रक्रिया पर ही आधारित है।

जडत्वीय परिसीमन (इनर्शियल कनफाईनमैंट) प्रणाली में किसी बाहरी शक्ति की आवश्यकता नहीं होती। इसमें पदार्थ के जडत्व को परिसीमन के लिए प्रयोग में लाया जाता है। कोई भी पदार्थ अपने जड़त्व के कारण अपना स्थान तथा स्वरूप बदलने में कुछ समय लेता है जड़त्वीय परिसीमन में इसी समय के अंदर उपयुक्त मात्रा में संलयन अभिक्रियाएं होने के लिए परिस्थितियाँ पैदा की जाती हैं। इस परिसीमन की अवधि बहुत कम होती है। क्योंकि इन परिस्थितियों को लम्बी देर तक बनाऐ रखना कठिन है। उदाहरणत: यह अवधि कुछ ही नैंनो सैकण्ड होती है, इसलिए ईंधन को गर्म करने के लिए पूरी ऊर्जा इस छोटी सी अवधि में ही देनी पड़ती है। लेसर का अविष्कार तथा उच्च शक्ति, कम अवधि वाले स्पंद लेसरों का विकास इस दिशा मे बहुत सहायक सिध्द हुआ है, आज ऐसे लेसर विद्यमान हैं जो 200 किलो जूल तक ऊर्जा,केवल एक नैनो सैकण्ड की अवधि में दे सकते हैं, इन लेसर पुंजों को संकेंद्रित करके अतिउच्च तीव्रता पैदा की जा सकती है।

संपीडन की आवश्यकता :

संलयन ऊर्जा को व्यवहारिक रूप से प्रयोग करने के लिए यह आवश्यक है इससे उत्सर्जित ऊर्जा की मात्रा इनके ऊपर व्यय की हुई ऊर्जा से अधिक हो। इसे

निम्नलिखित समीकरण द्वारा दर्शाया जाता है जिसे लॉसन मापदंड कहते हैं ।

$\eta\tau \geq 10^{14}$ प्रति घन सें.मी. सैकण्ड

यहाँ η प्लाज्मा घनत्व तथा τ परिसीमन अवधि हैं । चुम्बकीय परिसीमन प्रणाली में प्लाज्मा घनत्व कम होता है, इसलिए इसे बहुत लम्बे समय तक परिसीमित करना आवश्यक है । जड़त्वीय परिसीमन प्रणाली में लॉसन मापदंड को एक अन्य रूप में भी लिखा जाता है ।

$\rho R \sim 6$ ग्रा. / वर्ग सेमी.

यहाँ ρ ईंधन गुटिका का घनत्व तथा R गुटिका का अर्धव्यास है । ρR गुनणफल यह भी दर्शाता है कि कितना प्रतिशत ईंधन जला है ।

$$f = \frac{\rho R}{6 + \rho R}$$

इसलिए यदि हम यह चाहें कि 50% ईंधन अवश्य जलना चाहिए तो हमें ρR गुनणफल को कम से कम 6 ग्रा. प्रति वर्ग सें.मी. तक अवश्य रखना पडेगा । इस ईंधन को जलानें के लिए अपेक्षित लेसर ऊर्जा गुटिका में ईंधन के भार के समानुपाती होती है, जिसे हम निम्नलिखित समीकरण द्वारा दर्शाते है ।

अपेक्षित लेसर ऊर्जा α गुटिका का भार

$$\propto \frac{4\pi \rho R^3}{3}$$

$$\propto \frac{4\pi}{3}\left(\frac{1}{\rho^2}\right)(\rho R)^3$$

इसलिए यदि अमुक ρR गुनणफल अधिक घनत्व पर प्राप्त हो सके तो अपेक्षित लेसर ऊर्जा को कम किया जा सकता है । उदाहरणतया यदि हमें $\rho R = 6$, $\rho = 1000$ ग्रा. प्रतिघन सें.मी. के घनत्व पर प्राप्त हो तो अपेक्षित ऊर्जा $\rho = 1$ ग्रा.प्रति घन सेंमी. घनत्व की तुलना में 10^6 गुणा कम होगी । इसलिए डी-टी ईंधन को संपीडित किया जाता है ताकि उसका घनत्व बढ़ाया जा सके । संपीडन प्रक्रिया लेसर प्रेरित संलयन प्रणाली की अति महत्वपूर्ण प्रक्रिया है ।

लेसर प्रेरित संलयन प्रक्रिया :

लेसर प्रेरित संलयन की पूरी प्रक्रिया (चित्र-मुख पृष्ठ पर दिया गया है) में दर्शाया गया है । इसमें एक काँच की गोल गुटिका में डी-टी मिश्रण रूपी ईंधन को भर कर उसे चारों तरफ से उच्च शक्ति लेसर पुन्जों से प्रकाशित किया जाता है । जिसके कारण गुटिका की बाहरी सतह तुरंत ही प्लाज्मा में परिवर्तित हो जाती है । यह प्लाज्मा गुटिका की सतह पर अधिक घनत्व का होता है । तथा बाहर की तरफ फैलने के कारण इस प्लाज्मा का घनत्व गुटिका से दूर कम होता चला जाता है । अब लेसर इस प्लाज्मा को एक निश्चित घनत्व तक ही बेध पाता हैं जहाँ पर लेसर की आवृत्ति प्लाज्मा आवृत्ति के बराबर हो जाती है । इस सतह को हम क्रान्तिक घनत्व सतह कहते हैं । यह सतह गुटिका की ठोस सतह से तकरीबन 150-200 माइक्रोन दूर होती है तथा आपतित लेसर की आवृत्ति पर निर्भर करती है । सूक्ष्म तरंगदैर्ध्य वाले लेसर अति उच्च आवृत्ति के होने के कारण प्लाज्मा को अधिक दूरी तक बेध सकते हैं । इसलिए ऐसे लेसरों, जैसे एक्साइमर, क्षकिरण इत्यादि, के लिए क्रान्तिक घनत्व सतह गुटिका की ठोस सतह के काफी पास ही होती है ।

लेसर ऊर्जा का अवशोषण तथा स्थानांतरण इस क्रान्तिक घनत्व सतह से ही होता है । यहीं से लेसर ऊर्जा का अपवर्तन, परावर्तन तथा प्रकीर्णन भी होता है । लेसर ऊर्जा का अवशोषण मुख्य रुप से दो प्रक्रियाओं द्वारा होता है; (1)प्रतिलोमी ब्रैमस्ट्राहलंग, तथा (2) अनुनादीय अवशोषण । किसी भी ऊष्मित प्लाज्मा में इलेक्ट्रॉन आयन के समीप जब एक हल्के टकराव का अनुभव करते है तो वह ऊर्जा का उत्सर्जन करते हैं । जिसे ब्रैमस्ट्राहलंग विकिरण के नाम से जाना जाता है । इसके विपरीत इलेक्ट्रॉन किसी आयन से टकराते हुए आने वाले फोटॉन का अवशोषण भी कर सकता है । इस प्रक्रिया द्वारा ऊर्जा के अवशोषण की संभावना प्रबल होने के लिए यह आवश्यक है कि अधिक टकराव हो अर्थात प्लाज्मा का घनत्व अधिक हो और ताप कम हो । इस प्रकिया द्वारा कम वेग के इलेक्ट्रॉन अपेक्षाकृत अधिक ऊर्जा का अवशोषण कर सकते हैं । इसलिए यह प्रक्रिया प्लाज्मा को समान रुप से ऊष्मित इलेक्ट्रॉनों का

जनन नहीं करती। इन्ही कारणों से कम तरंगदैर्ध्य के लेसर अधिक उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। क्योंकि यह लेसर प्लाज्मा को अधिक दूरी तक बेध सकते हैं, जहाँ घनत्व अधिक तथा तापमान कम होता है इसलिए ऊर्जा का अवशोषण मुख्य रूप से लाभकारी प्रक्रिया प्रतिलोमी ब्रैमस्ट्राहलंग द्वारा होता है। अनुनादीय अवशोषण में आपतित लेसर विकिरण से संबंधित विद्युत क्षेत्र प्लाज्मा में विशेष प्रकार की तरंगे पैदा करता है। जिन्हें इलेक्ट्रॉन प्लाज्मा तरंगों के नाम से जाना जाता है। इस तरह से लेसर ऊर्जा का प्लाज्मा तरंगों के माध्यम से प्लाज्मा में सीधे स्थानांतरण होता है। यह प्रक्रिया प्लाज्मा को समान रूप से ऊष्मित नहीं करती और आम तौर से इस प्रक्रिया द्वारा अ-मैक्सवैलियन वितरण उत्पन्न होता है जिसमें कुछ इलेक्ट्रॉन बहुत अधिक ऊर्जा का अवशोषण करके अति उच्च वेग धारण करते हैं। यह ऊष्मित इलेक्ट्रॉन संपीडन प्रक्रिया में बाधक सिद्ध होते हैं।

क्रान्तिक घनत्व सतह से ऊर्जा का स्थानांतरण इलेक्ट्रॉनों द्वारा होता है। इलेक्ट्रॉन गुटिका की ठोस सतह तक जा कर अपनी ऊर्जा देते है। तथा इस ऊर्जा के अवशोषण से सतह का पदार्थ उच्छेदित होता है। बाहर की तरफ उच्छेदित हो रहा पदार्थ एक प्रघाती तरंग को जन्म देता है जो गुटिका का संपीडन करता हैं। इस तरह से डी टी ईंधन भरा क्रोड़ अति घनत्व तक पहुँच जाता है तथा इसका केन्द्र तापमान इतना बढ़ जाता है कि संलयन अभिक्रियाएं शुरु हो सके। इन अभक्रियाओंसे उत्सर्जित अल्फा कणों का केन्द्र के इर्दगिर्द ठण्डे क्रोड में अवशोषण होता है। जिसके फलस्वरूप उस भाग में भी संलयन अभिक्रियाएं शुरू होती हैं। इस प्रकार एक ज्वलन तरंग केन्द्र से बाहर की ओर बढ़ती है तथा अपने साथ डी टी ईंधन को जलाती चली जाती है।

'चालक' लेसर का चयन :

संलयन रिएक्टर को चलाने के लिए उपयुक्त लेसर चयन के लिए कई महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना आवश्यक हैं। हम यह देख चुके हैं कि संलयन अभिक्रियाओं की ताप अवसीमा को पार करने के लिए अति उच्च ऊर्जा की आवश्यकता है जो बहुत ही कम अवधि में ईंधन को प्राप्त होनी चाहिये। इसलिए 'चालक' लेसर अति उच्च शक्ति का लेसर होना चाहिए जो लगभग 10^{13}-10^{14} वाट/सें.मी.$^{-2}$ तक तीव्रता प्रदान कर सके। ऐसे कई लेसरों का विकास एवं निर्माण किया जा चुका है जो इतनी अधिक तीव्रता प्रदान कर सकते है। जैसे कार्बन डाइआक्साइड लेसर, नियोडिमियम ग्लास लेसर तथा एक्साईमर लेसर

तालिका : चालक लेसर की होड़ में

चालक लेसर के अपेक्षित गुणधर्म		विभिन्न लेसरों की वर्तमान स्थिति*		
		कार्बनडाईआक्साईड	नियोडिमियम ग्लास	एक्साईमर krF
ऊर्जा	1-3 मैगाजूल	40 किलो जूल (एन्टारस लेसर)	200 किलो जूल (नोबो)	100 किलो जूल (अरोरा)
स्पंदअवधि	5-1- नैनो से.	संभव	संभव	संभव
पुनरावृत्ति	3-10 हर्ज	संभव	30 मिनटों में एक बार	1000 हर्ज
क्षमता	5-10%	> 10% अधिकाधिक ~ 20%	~ 1%	~ 8%
तरंगदैर्ध्य ~	0.5 माईक्रोन	10.6 माईक्रोन	1.06 माईक्रोन	0.25 माईक्रोन

* यह गुणधर्म अलग अलग लेसरों में दर्शाये जा चुके है तथा एक साथ एक लेसर में उपलब्ध नही हैं।

इत्यादि। दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है, लेसर की तरंगदैर्ध्य का ऊर्जा अवशोषण पर प्रभाव। जैसे पहले बताया जा चुका हैं की कम तरंगदैर्ध्य के लेसर प्लाज्मा को समान गर्म कर सकते हैं। तथा इस तरह के लेसरों द्वारा ऊर्जा की क्षति (परावर्तन तथा प्रकीर्णन प्रक्रियों द्वारा) कम होती है साथ ही साथ कम तरंगदैर्ध्य के लेसरों से प्लाज्मा में उत्पन्न होने वाली विभिन्न अस्थिरताओं की अवसीमा अधिक होती है जिसके फलस्वरूप यह अस्थिरताएं पैदा नहीं हो पाती। ऊर्जा अधिक से अधिक आयनों तथा इलेक्ट्रॉनों में बंटती है इसलिए गुटिका को मिला संवेग अधिक होता है। यह सभी लाभकारी बातें है।

कम तरंगदैर्ध्य के लेसर क्योंकि प्लाज्मा को अधिक दूरी तक बेध सकते है इसलिए क्रान्तिक घनत्व सतह तथा उच्छेदन सतह के बीच का अन्तर कम होता है। इसलिए जो आपतित लेसर पुन्ज की तीव्रता में असमताएं हैं उनका प्रभाव सीधा उच्छेदन सतह पर अंकित हो जाता है इससे संपीडन में अस्थिरता उत्पन्न होती है, विशेषकर रैले-टेलर अस्थिरता। यह अस्थिरता तब उत्पन्न होती है जब किसी हल्के द्रव्य में केन्द्रीय बल के प्रभाव में किसी भारी द्रव्य को संभाला हुआ हो। उदाहरण के तौर पर यदि हम स्याही की एक बूंद पानी की सतह पर छोड़ें तो स्याही पानी से भारी होने के कारण पानी की सतह को बेध कर पानी में घुसती चली जाती है। इस उदाहरण में केन्द्रीय बल गुरुत्वाकर्षण का बल है। इसी तरह संपीडीत होता हुआ ठोस क्रोड एक भारी द्रव्य है जो कि कम घनत्व वाले द्रव्य (उच्छेदन सतह से पैदा हुए प्लाज्मा) द्वारा धकेला जा रहा है। इसमें केंन्द्रीय बल प्रघाती तरंगों द्वारा उत्पन्न बल है जिसके फलस्वरूप क्रोड को संपीडीत किया जा रहा है। यदि क्रान्तिक घनत्व सतह तथा उच्छेदन सतह की दूरी अधिक हो तो यह तो यह असमताएं निष्क्रिय हो सकती है। इन समस्याओं को दूर करने के लिए गुटिका के विभिन्न अभिकल्पनाओं पर अनुसंधान एवं विकास कार्य किए जा रहे है। जिनमें कैनन-बाल तथा होलारम गुटिकाएं विशेष हैं। चालक लेसर के कुछ विशेष गुणधर्म तथा विभिन्न लेसरों की वर्तमान स्थिति तालिका में दर्शायी गई है।

कार्बन डाई आक्साइड लेसर लम्बी तरंगदैर्ध्य (10.6 माईक्रोन) का होने के कारण विभिन्न समस्याएं पैदा कर सकता है जो संपीडन में बाधा उत्पन्न करता है। नियोडिमियम ग्लास तथा एक्साइमर लेसर ही भविष्य में चालक लेसर की भूमिका निभा सकते हैं। नियोडिमियम ग्लास की तरंगदैर्ध्य को विभिन्न अरैखिक प्रक्रियाओं द्वारा आवृत्ति परिवर्तन करके छोटा किया जा सकता हैं। इसकी क्षमता तथा पुनरावृत्ति को बढ़ाने हेतु विकास तथा अनुसंधान कार्य जारी हैं। विश्व में सबसे अधिक शक्तिशाली लेसर नियोडिमियम ग्लास लेसर ही है जो कि अमेरिका की लारेंस लिवरमूर प्रयोगशाला में कार्यरत है। साथ ही साथ लॉस एलामोस प्रयोगशाला में उच्च शक्ति एक्साइमर लेसर के निर्माण का कार्य चल रहा है जिसके सभी गुणधर्म अपेक्षित गुणधर्मों से बेहतर हैं।

अन्त में हम यह कहना चाहेंगे कि लक्ष्य भले ही साफ नज़र आ रहा हो, इस पृथ्वी पर एक नन्हें से सूर्य के निर्माण की मन्जिल अति दूर है, रास्ता नाना प्रकार की बाधाओं से भरा हुआ है। परन्तु विश्वभर में सेंकडों हजारों वैज्ञानिक तथा टैक्नीशीयन मन में एक दृढ विश्वास लिए इस लक्ष्य को साधने में जुटे हुए। लाखों डॉलर इस पर खर्च किए जा चुके हैं। परन्तु मानवजाति के लिए ऊर्जा का इतना अधिक महत्व है कि इस दिशा में किया गया कोई भी प्रयास विफल नही है। आगामी वर्षों में एक सफल लेसर संलयन रिएक्टर के निर्माण की सुखद कल्पना की जा सकती है।

♣ ♦ ♣ ♦

हिन्दी की सर्वप्रथम विज्ञान - पत्रिका

विज्ञान (मासिक)

75 से भी अधिक वर्षों से निरंतर प्रकाशित

संपर्क सूत्र : विज्ञान परिषद, महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद - 211 002

कम्प्यूटर की सहायता से भारतीय भाषाओं में अधिगम-शिक्षण

डॉ रेखा गोविल
वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

कंप्यूटर वर्तमान समय की एक आवश्यकता बन गयी है। इसकी क्षमताओं का लाभ वैज्ञानिक जानकारियों की खोज, आंकडा एकत्रीकरण एवं व्यापारिक प्रयोजनों में अधिकाधिक बढ़ रहा हैं। आज जब भारतीय भाषाओं में कार्य करनेवाले कंप्यूटर बन चुके हैं तो क्यों न उनका लाभ जनसाधारण को उनके शिक्षण में मिले। प्रस्तुत लेख में इस कार्य की दिशा में जानकारी देने का प्रयास किया गया है ।

कम्प्यूटर में अपार क्षमता है और "क्षमता" शब्द ही इस बात का द्योतक है कि इसके प्रयोग में अभी आगे और आगे बढ़नें की असीन सम्भावनाएं हैं। 80 के दशक में वैयक्तिक (पर्सनल) कम्प्यूटर के आगमन से अनुप्रयोगों के इतने विस्तृत आयाम उपलब्ध हो गये हैं कि जीवन का कोई कार्यक्षेत्र इनसे अछूता नहीं है । शिक्षा के क्षेत्र में भी कम्प्यूटर विभिन्न रूपों में आज विद्यमान है, चाहे वह प्रशासन हो, अंकतालिका निर्माण हो अथवा कम्प्यूटर आधारित शिक्षण हो। स्कूली शिक्षा में कम्प्यूटर की सहायता से अधिगम-शिक्षण पर भारत सरकार काफी बल दे रही है और इसी उद्देश्य से "CLASS" प्रायोजना भी प्रारम्भ की गई थी परन्तु उचित पूर्वनियोजन के अभाव सें वह आशानुसार सफलता न पा सकी।

यदि शिक्षा के क्षेत्र में हम कम्प्यूटर से लाभकारी सहयोग चाहते हैं तो आज की मांग है कि हम विचार करें कि कम्प्यूटर क्या कर सकाता है ? और हम उससे क्या करवाते हैं ? उपरोक्त दोनों अलग-अलग मुद्दे हैं, जिन पर हमें गहराई से विचार करना होगा । शिक्षण - अधिगम में कम्प्यूटर के प्रयोग से पूर्व यह जानना आवश्यक हैं कि अधिगम के लिये किसी भी प्रयोग के लिए तीन शर्तें पूरी करना आवश्यक है;

(i) अधिगम रूचिपूर्ण, उत्साहवर्धक तथा संतुष्टिदायक हो,
(ii) अधिगम सुसम्बद्ध हो अर्थात् विद्यार्थी उसकी आवश्यकता स्वयं महसूस करता हो, और
(iii) अधिगम व्दारा विद्यार्थी के ज्ञान में वृद्धी हो।

कम्प्यूटर में कुछ ऐसे विशिष्ट गुण विद्यमान हैं जो उसे अधिगम - शिक्षण के लिये उपयोगी बनाते हैं, यथा :

- तीव्र गति एवम् अपार भण्डारण क्षमता
- पूर्व स्थिती में वापस लौटने की अद्‌भुत क्षमता
- दृश्य - चित्र माध्यम

इन गुणों का प्रयोग कर कम्प्यूटर का शिक्षण में प्रयोग तीन विभिन्न रूपों में किया जा रहा है ; (i) कम्प्यूटर का विद्यार्थी व्दारा स्वतंत्र प्रयोग जिसमे विद्यार्थी समस्या निराकरण हेतु प्रोग्रामन कर कम्प्यूटर व्दारा वांछित परिणाम प्राप्त करता है, (ii) कम्प्यूटर का उपकरण के रुप में प्रयोग जैसे शब्द-संसाधक अथवा कम्प्यूटर खेल आदि, और (iii) कम्प्यूटर का शिक्षकीय रुप में प्रयोग, जिसमें प्रोग्राम किसी विषय से संबंधित प्रकरण पर ठीक उसी प्रकार अनुदेशन करते हैं जैसे एक अध्यापक ।

उपरोक्त तीनों ही रुपों के उचित प्रयोग द्वारा कम्प्युटर औपचारिक, अनौपचारिक शिक्षा अथवा विशिष्ट विधार्थीयों जैसे शारीरिक अथवा मानसिक विकलांगों के अधिगम शिक्षण में सहायक, की महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है परन्तु आवश्यकता है, इस प्रकार के सॉफ्टवेअर प्रोग्राम तैयार करने की जो अधिगम - शिक्षण के उद्देश्यों की पूर्ती कर सके और शिक्षकों को इस तथ्य से भलीभांति परिचित कर सके कि इस प्रकार तैयार प्रोग्राम किस प्रकार विद्यार्थी के वकास में सहायक होंगे ।

विगत समय में, भारत में कम्प्यूटरों के कक्षागम प्रयोग के मार्ग में एक प्रमुख बाधा यह रही है कि कम्प्यूटर के साथ पारस्परिक सम्पर्क का माध्यम

केवल अंग्रेजी भाषा ही रही है । जब कि देश के 80% से अधिक विद्यालयों में प्राथमिक एवम् माध्यमिक स्तर पर अनुदेश माध्यम हिन्दी अथवा अन्य क्षेत्रीय भाषाएं हैं और यही बात कमोवेश उच्चस्तरीय शिक्षा में भी अनुदेश माध्यम के बारे में सही है कम्प्यूटर के क्षेत्र में प्रयोग हेतु ऐसे विभिन्न पारस्परिक इन्टरफेसों के निर्माण व प्रयोग की आवश्यकता है जिनके द्वारा कम्प्यूटर से हिन्दी अथवा अन्य भारतीय भाषाओं में सम्पर्क स्थापित किया जा सके । इस दिशा में पिछले कुछ वर्षों में इलेक्ट्रॉनिकी विभाग ने मानकीकरण के निम्न मुख्य कार्य किये है :

- भारतीय भाषाओं के लिए कोड का मानकीकरण (ISCII-इस्की कोड)
- कुँजीपटल के ढांचे का मानकीकरण तथा
- विभिन्न लिपियों के अक्षरों के आकारों का विकास तथा मानकिकरण ।

'इस्की' के प्रयोग द्वारा अब कम्प्यूटरों पर संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त सभी भारतीय भाषाओं की लिपियों में कार्य करना संभव है । साथ ही इस कोड में अन्तर्राष्ट्रीय मानक अर्थात अमरीकी मानक की इस कोड **(ASCII)** आस्की के तत्वों को भी रखा गया हैं जिससे अंग्रेजी वर्णाक्षरों का भी आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सके । इनपुट-आउटपुट इन्टरफेस का कार्यान्वयन प्रभावी ढंग से करने के लिए सी-डैक, पुणे द्वारा "ग्राफिक्स एवम् बुद्धि पर आधारित लिपि प्रौद्योगिकी" (GIST)" का विकास किया गया है । जिस्ट-1000 नामक एक विशिष्ट प्रयोजन वी.एल.एस.आई. चिप द्वारा यह प्रौद्योगिकी वैयक्तिक कम्प्यूटरों में सभी भारतीय भाषाओं में इनपुट तथा प्रदर्शन की क्षमता उपलब्ध कराती है । "जिस्ट" के अतिरिक्त पूर्णत: सॉफ्टवेअर समाधान भी प्रयुक्त किये जा सकते हैं जो कि भारतीय भाषाओं में इनपुट-आउटपुट की सुविधा उपलब्ध करा सके ।

अब आज की मांग यह है कि बडे पैमाने पर भारतीय भाषाओं में अधिगम - शिक्षण हेतु उपयोगी सॉफ्टवेअर विद्यार्थी की उम्र, मानसिकता व विषय विशेष के अनुसार चुना जाये ।

कम्प्यूटर बाल-शिक्षा में : इस हेतु निर्मित सॉफ्टवेअर इस प्रकार का होना चाहिये कि वह किसी विषय विशेष के ज्ञान तक ही केंन्द्रित न रह कर उसके समग्र विकास में सहयोगी हो । बालक को कम्प्यूटर के भली-भांति प्रयोग का वातावरण उपलब्ध कराया जाये । इस उद्देश्य के लिए कम्प्यूटर के उपकरण के रूप में प्रयोग हेतु ऐसे सॉफ्टवेअर बनाये जो

- बाल शिक्षा के सिद्धांतों एवं उद्देश्यों के अनुरूप हो,
- बालक तो तुरन्त प्रतिसूचना प्रदान कर सकें,
- प्रयोग में अति सरल एवम् रोचक हो, तथा
- सम्पर्क भाषा के रूप में मातृभाषा का प्रयोग करते हों ।

कम्प्यूटर प्राथमिक एवम् माध्यमिक शिक्षा में : इस स्तर पर या तो CAI प्रोग्राम उपयुक्त रहते हैं जिनमें कम्प्यूटर एक शिक्षक की भूमिका अदा करता है, अथवा अभ्यास और सिमुलेशन प्रोग्राम ।

कम्प्यूटर का शिक्षकीय प्रयोग : इस प्रकार के प्रोग्राम विषय वस्तु से सम्बन्धित ज्ञान को अनुदेशन द्वारा इस प्रकार विद्यार्थी के समक्ष प्रस्तुत करते हैं कि विद्यार्थी अपनी गति से विषय को आत्मसात कर सकता है ।

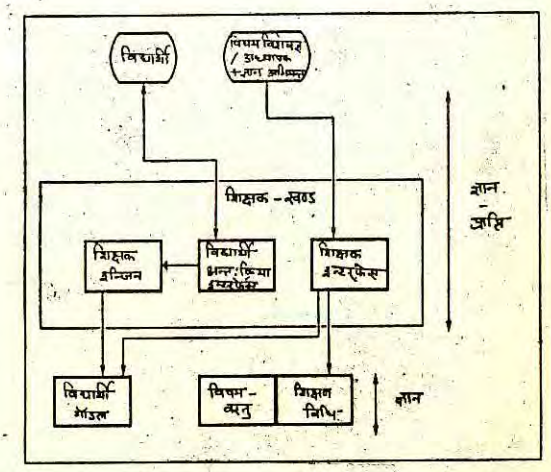

चित्र - 1 प्रबोध का संघटन

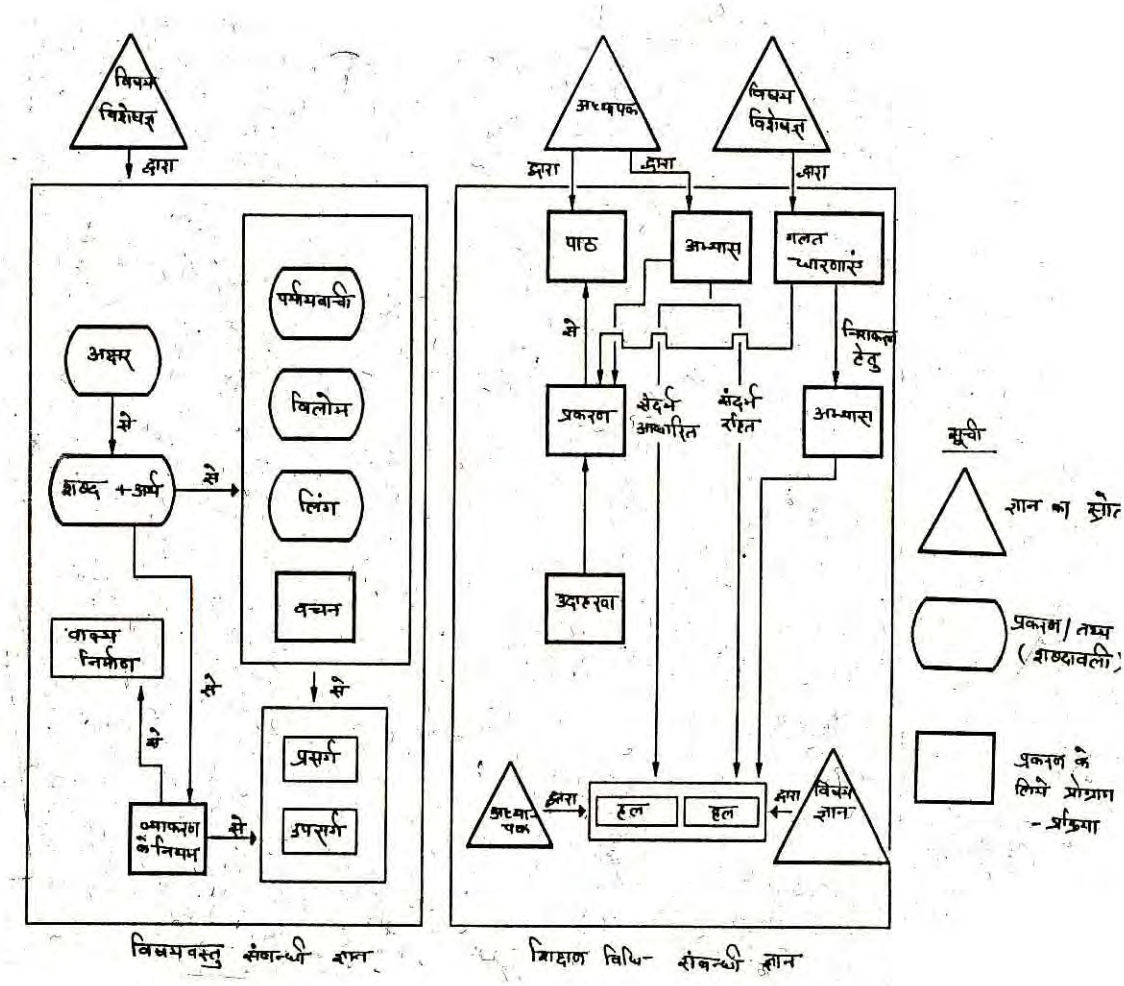

चित्र - 2 वैचारिक जालक्रम

पूछे गये प्रश्नों के विद्यार्थी द्वारा दिये गये उत्तरों के आधार पर आगे प्रस्तुत किये जाने वाले फ्रेम का चयन प्रोग्राम ही करता है प्राय: अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध प्रोग्राम विद्यार्थी द्वारा दिये गये उत्तरों का गलत/सही में मूल्यांकन तो कर देते हैं परन्तु इस विश्लेषण में असमर्थ हैं कि कोई उत्तर गलत विद्यार्थी द्वारा क्यों दिया गया है। इस क्षमता को प्रोग्राम में डालने के लिये विद्यार्थी की मानसिक प्रक्रिया का मॉडल निर्माण आवश्यक है । कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीकों (Artificial Intelligence) के प्रयोग द्वारा प्रोग्राम को यह क्षमता देना सम्भव है ।

प्रबुद्ध शिक्षकीय तन्त्र : शिक्षकीय प्रोग्राम प्रबुद्ध हो, इस के लिए उसमें निम्न तीन घटकों का होना आवश्यक

है :

- कम्प्यूटर प्रोग्राम को सम्पूर्ण विषय वस्तु का ज्ञान ।
- प्रोग्राम में विद्यार्थी की अधिगम-प्रक्रिया का अनुमान लगाने की क्षमता ।
- प्रोग्राम की शिक्षण विधि इस प्रकार होना कि वह विद्यार्थी अथवा विशेषज्ञ में भेद कर सके ।

उपरोक्त घटकों के लिये इन तन्त्रों में तीन विशेष प्रकार का ज्ञान भण्डारित किया जाता है :

(i) विषय- वस्तु ज्ञान,
(ii) विद्यार्थी विश्लेषण हेतु ज्ञान,
(iii) पाठ्यक्रम सम्बन्धी अनुदेशन विधि ज्ञान ।

प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री ब्लूम के अनुसार औपचारिक शिक्षण सर्वाधिक प्रभावकता (98%) तब पाई गई है जब अध्यापक एवम् विद्यार्थी का अनुपात 1:1 हो । अत: यदि प्रबुद्ध शिक्षकीय तंत्र का निर्माण सावधानी पूर्वक कक्षागत शिक्षण की प्रभावकता के महत्वपूर्ण बिन्दुओं यथा उद्देश्य, विषय-प्रस्तुतीकरण, विधियां एवम् मूल्यांकन को ध्यान में रख कर किया जाये तो न केवल सामान्य वरन् विशिष्ट विद्यार्थियों के लिये कई परिस्थितियों में ये तन्त्र अत्यन्त प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं ।

उदाहरण के रूप में वनस्थली विद्यापीठ में निर्माणाधीन हिन्दी भाषा शिक्षण हेतु एक प्रबुद्ध शिक्षकीय तन्त्र का संक्षिप्त वर्णन दिया जा रहा है ।

प्रबोध : प्राथमिक स्तर पर भाषा-कौशल विकास हेतु प्रबुद्ध शिक्षक

भाषा कौशल का विकास प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का एक अनिवार्य अंग है । भविष्य में साहित्य के पठन-लेखन एवम् सम्पर्क हेतु भाषा-तत्वों के प्रयोग में विद्यार्थी में एक निश्चित स्तर तक की स्वचालकता का विकास इस शिक्षा का उद्देश्य होता है। वर्तमान में सम्भव है सभी कक्षा-अध्यापक भाषा-शिक्षण अधिगम व अनुदेशन के सिद्धांतों पर आधारित शिक्षण न कर पाते हों । इस कार्य के लिये सहायक के रुप में एक प्रबुद्ध शिक्षकीय तन्त्र, जो कि विद्यार्थी के संज्ञानात्मक विकास पर आधारित हो, निश्चय ही उपयोगी सिद्ध होगा । इसी उद्देश्य से "प्रबोध" की संरचना की गई है । संरचना को चित्र-1 में दिखाया गया है और विषय-वस्तु के ज्ञान तथा शिक्षण-विधि सम्बंधी ज्ञान वैचारिक जालक्रम चित्र-2 में ।

निर्माण के उपरान्त "प्रबोध" का पयोग कर शिक्षक इच्छानुसार पाठ एवम् अभ्यासों का निवेश कर इस का प्रयोग न केवल प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर भाषा तत्वों के सामान्य शिक्षण में अपितु कमजोर विद्यार्थियों एवम् द्वितीय भाषा तथा विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी भाषा शिक्षण हेतु कर सकते हैं ।

सारांश में इस की सम्भावनाएं असीम हैं । आवश्यकता है शिक्षा शास्त्रियों एवम् कम्प्यूटर विशेषज्ञों, दोनों ही समुदायों को प्रतिबद्ध होकर ये विचार करने की कि शिक्षण के सिद्धांतों के अनुरूप किस विषय पर किस प्रकार के प्रोग्राम तैयार किये जाने चाहिये । जब कम्प्यूटर का आगमन सुनिश्चित है तो उधार के प्रोग्रामों पर नजर रखने की अपेक्षा क्यों न उसके सकारात्मक प्रयोग की दिशा में समय रहते प्रयास किया जाये ?

♣♦♣♦

विज्ञान कविता
प्रकट होती रिसर्च

साधना उपमा उपमेय निष्कर्ष
प्राण वल्लभा तुम ही हो रिसर्च ।
क्षेप विक्षेप घटना दुर्घटना,
वाद-विवाद, क्षमता न घटना
हों जब प्रमाणित असंख्य परामर्श
तब प्राण वल्लभा कहलाए रिसर्च ।
दुर्बल काया, द्विगुणित उत्साह
क्षीण साधन, असीम मनोबल
पालन पोषण, विषाद हर्ष
तब होती प्रकट तुम रिसर्च ।
तुम अर्पित मुझे मैं समर्पित तुम्हें
आओ अब दिल की बातें कहें
मिले सहयोग कर लें सर्च
हों दर्शन तब तुम्हारे रिसर्च ।
प्राण वल्लभा तुम ही हो रिसर्च ।

मेघ सचदेव
एन.पी.सी. विक्रमभवन, बम्बई.

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन में उपग्रह प्रमोचन वाहनों का विकास*

डॉ. सुरेश चन्द्र गुप्ता
निदेशक,
विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र,
तरुवनन्तपुरम

प्रमोचन वाहनों के अभिकल्पन में न केवल सभी इंजीनियरी पहलुओं पर निर्भर होना होता है, बल्कि उन सब में परस्पर ताल-मेल, अंतर्क्रिया तथा बहुक्षेत्रीय कुशलता की आवश्यकता भी होती है। इस लेख में प्रमुख क्षेत्र जैसे, मिशन योजना और विश्लेषण, वायु और उड़ान गतिकी, नोदक और नोदन तंत्र, नौसंचालन नियंत्रण और निर्देशन, संरचनात्मक विश्लेषण, दूरमिती अनुवर्तक और दूरादेश, तथा तंत्र विश्वसनीयता पर संक्षिप्त रुप में प्रकाश डाला गया है।

भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम का प्रमुख लक्ष्य राष्ट्रीय विकास के लिए अत्यावश्यक विस्तृत बहुमुखी सुनियमित एवं सुव्यवस्थित अंतरिक्ष सेवायें प्रदान करना है। इस समय संचार एवं सुदूर संवेदन सेवाओं को प्रमुखता दी जा रही है।

संचार के अन्तर्गत दूरसंचार, दूरदर्शन, रेडियो नेटवर्किंग, मौसम से उत्पन्न खतरों की चेतावनी शामिल है। सुदूर संवेदन मौसम, वन, कृषि, जलाशयों, खनिज संसाधनों, भूमि उपयोग आदि पर ध्यान देते हैं। आजकल इन्सैट-डी, इन्सैट-2 ए, आई.आर.एस-1 ए और आइ.आर.एस.-बी द्वारा ये सेवाएँ राष्ट्र को उपलब्ध की जा रही हैं।

राष्ट्र के लिए इन सेवाओं की बढ़ती आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए तथा राष्ट्र में उपलब्ध प्रचुर मानवीय एवं औद्योगिक संसाधनों के सन्दर्भ में, भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन, की निति का आधार है स्वावलम्बन। इस नीति के अन्तर्गत प्रमोचन वाहन प्रौद्योगिकी में भी स्वावलंबन का लक्ष्य स्वाभाविक है, क्योंकि अंतरिक्ष सेवाओं के लिए उपग्रह तथा उपग्रह को विशिष्ट कक्षा में पहुँचाने के लिए प्रमोचन वाहन की आवश्यकता स्पष्ट है। अत: आइ.एस.आर.ओ. में प्रमोचन वाहनों का अधिक महत्व और भूमिका स्वाभाविक है। इस लेख में, आइ.एस.आर.ओ, में प्रमोचन वाहन विकास के कुछ प्रमुख पहलुओं,

तालिका - 1

वाहन	मिशन	कक्षा	प्रदाय - भार (किग्रा)	प्रमोचक भार (टन)
ए एस एल वी	विज्ञान	एल ई ओ	150	39
पी एस एल वी	सुदूर संवेदन	एस एस ओ	1000	275
जी एस एल वी	संचार	जी टी ओ	2000-2500	400

नोट: ए एस एल वी - Augumented Satellite Launch Vehicle, पी एस एल वी - Polar Satellite Launch Vehicle, जी एस एल वी - Geo Stationary Satellite Launch Vehicle, एल ई ओ - Low Earth Orbit, एस एस ओ - Sun Sunchronous Orbit, जी टी ओ - Geo Stationary Transfer Orbit

* रजत जयंती समारोह के दौरान प्रस्तुत वार्ता पर आधारित

उनकी स्थिति और निकट भविष्य की योजनाओं पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है।

आइ एस आर ओ के वर्तमान प्रमोचन यान :

आइ एस आर ओ द्वारा अभिकल्पित विभिन्न प्रमोचन यानों के उपयोग सम्बन्धित मिशनों की जानकारी तालिका - 1 मे दी गयी है।

प्रमोचन वाहन प्रौद्योगिकी के विकास प्राथमिक क्षेत्र :

प्रमोचन वाहन प्रौद्योगिक विकास वास्तव में इंजीनियरी के सभी मूल क्षेत्रों पर निर्भर करता है, जैसे, एविआनिकी, वैमानिकी, रासायनिक, यांत्रिक, पदार्थ, इलेक्ट्रोनिकी, विश्वसनीयता, तंत्र इंजीनियरी आदि। प्रमोचन वाहन अभिकल्पन में निम्नलिखित कुछ बातों पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

- मिशन योजना और विश्लेषण
- वायु और उड़ान गतिकी
- नोदक प्रोपेलेन्ट और नोदन तंत्र
- नौसंचालन, नियंत्रण और निर्देशन
- संरचनात्मक विश्लेषण
- दूरमिती (टेलिमीटरी) अनुवर्तक ट्रेकींग और दूरादेश (टेलिकमाण्ड)
- तंत्र विश्वसनीयता

प्रमोचन वाहक की विभिन्न प्रणालियां एक दुसरे के सहयोग पर निर्भर रहती हैं। अर्थात एक विशेष क्षेत्र में काम करने वाले विशेषज्ञ अकेले ही किसी भी प्रमोचन वाहन प्रणाली का संतोषजनक अभिकल्पन नहीं कर सकते। इस कारण विविध सक्रिय प्रणालियों, उप प्रणालियों के अभिकल्पन में लगे सहकर्मियों में परस्पर अंतर्क्रिया की अनिवार्यता इस कार्य को और कठिन बनाती है। प्रमोचन वाहन के सन्तोषजनक अभिकरण के लिए, वायुगतिकी का प्रकृति निर्धारण, विश्लेषण और संश्लेषण, संरचनात्मक लक्षण, नोदन तंत्र और पूरी उड़ान के दौरान समुचित अन्तर्सम्बन्ध की आवश्यकता होती है। नियंत्रण के बीच में यह अन्योन्याश्रिता प्रमोचन वाहन अभिकल्पन के पुरे कार्य को जटिल बनाती है, इसलिए सभी वैज्ञानिक एवं इंजीनियरों को मिल जुलकर इस बहुक्षेत्रीय काम की वास्तविक चुनौतियों का सामना करना पडता है।

प्रमोचन वाहन मिशन :

प्रमोचन वाहन का अभिकल्प मिशन की परिभाषा से शुरु होता है। इस मिशन को उसके प्रदाय उपग्रह के उपयोग के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। जैसे; (i) वैज्ञानिक, (ii) सुदूर संवेदन, (iii) संचार और (iv) मौसम विज्ञान

वैज्ञानिक मिशन का उद्देश अधिकतर पृथ्वी का पर्यावरण संबंधी अध्ययन होता है। इसके लिए सामान्यत: निम्न भू कक्षा यानी 300 से 600 किमी. की ऊँचाई पर, वृत्ताकार या दीर्घ वृत्तीय कक्षा पर्याप्त होती है। सुदूर संवेदन के लिए ध्रुवीय सूर्य-तुल्यकाली वृत्ताकरी कक्षा यानी 700 से 900 किमी. ऊँचाई पर कक्षा आवश्यक होती है। संचार और मौसम विज्ञान मिशनों को मुख्यत: भू स्थिर कक्षा की आवश्यकता है जिसकी ऊँचाई विषवतीय समतल में 36,000 किमी. है और जहाँ अंतरिक्ष यान भूमि के साथ स्थिर सा लगता है।

आइ एस आर ओ में प्रमोचन वाहन विकसित करने का पहला प्रयास 1970 में वैज्ञानिक मिशनों के वाहन को लक्ष्य करके हुआ था। यह प्रयास सफल रहा, जिसके फलस्वरुप एस एल वी-3 के निरंतर तीन सफल प्रमोचन हुए। यह आइ एस आर ओ के प्रमोचन वाहनों की पहली पीढ़ी के प्रतीक हैं। यद्यपि निम्न भू कक्षा में इसकी प्रदाय भार क्षमता केवल 40 किग्रा. थी, फिर भी एस एल वी-3 ने भारतीय अनुसंधान संगठन की उड़ान अभिकल्पन में आधारभूत क्षमता तथा प्रमोचन वाहनों की पुनारावृत्ती को स्पष्ट रुप से प्रमाणित कर दिया।

एस एल वी-3 के बाद संवर्धित उपग्रह प्रमोचन यान (ए एस एल वी) विकसित किया गया जिसकी प्रदाय भार क्षमता वृत्ताकार निम्न भू कक्षा में 150 किग्रा. है। एस एल वी-3 के समान ए एस एल वी में भी मुख्य नोदन के रुप में ठोस नोदक का उपयोग किया गया है। ए एस एल वी अभिकल्प में अनेक नयी प्रौघोगिकियाँ शामिल है जैसे : स्ट्रैप ऑन प्रोद्योगिकि, अंकीय ओटो पाइलट, संवृत पथ निर्देश, कुप्पेबाला धात्विक ताप कवच, वर्टीकल समुच्चय प्रकिया आदि। यद्यपि ए एस एल वी की पहली दो उड़ानें लक्ष्य प्राप्त करने में असफल रहीं, मई 20, 1992 की तीसरी

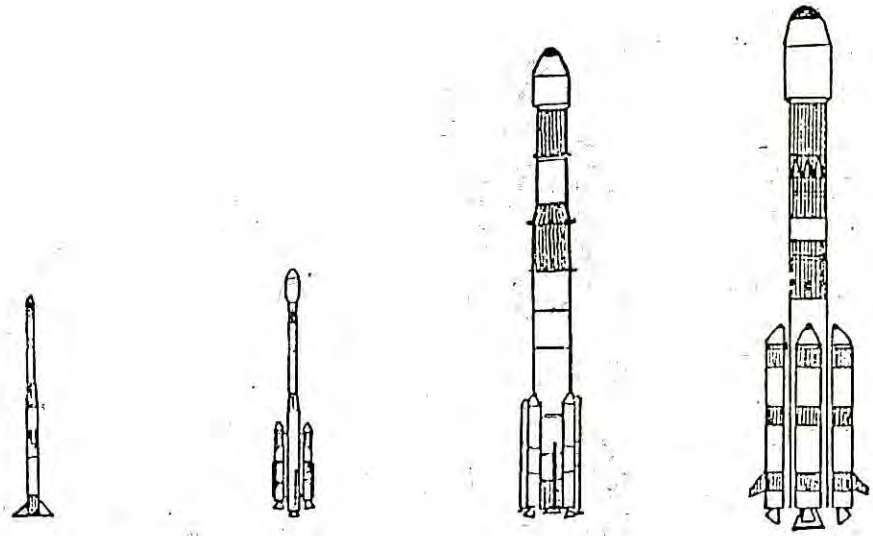

वाहन	एस एल वी-3	ए एस एल वी	पी एस एल वी	जी एस एल वी
भार.	17	40	275	402
प्रदाय भार	40	150	1000	2000
ऊँचाई	23	24	44	51
कक्षा	एल इ ओ	एल इ ओ	ध्रुवीय	जी टी ओ

चित्र - 1 आइ. एस. आर. ओ. के प्रमोचन वाहन

विकासात्मक उड़ान (ए एस एल वी डी-3) आशातीत सफल हुई। उसने सभी नयी प्रौद्योगिकी की अभिपुष्टि की और उड़ान में प्रमोचन वाहनों के आचरण से संबंधित मूल्यवान जानकारी प्रदान की। ए एस एल वी की सफलता यह दिखाती है की प्रमोचन यान अभिकल्पन और संविरचन के लिए आवश्यक उन्नत तकनीकी आइ एस आर ओ की पहुँच में हैं।

ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचन यान (पी एस एल वी) जो द्रव और ठोस दोनों नोदन प्रणालियों का उपयोग करता है, पूर्ण होने की अन्तिम स्थिती में है और इस साल में विकासात्मक प्रमोचन के लिए तैयार है। सूर्य तुल्यकाली कक्षा में 1000 किग्रा. के अपने अभिकल्पित प्रदाय भार की क्षमता से पी एस एल वी सुदूर संवेदन मिशनों के लिए संक्रियात्मक प्रमोचन सेवाएँ दे सकेगा (उदाहरण स्वरूप भारतीय सुदूर संवेदन उपग्रह मिशन)। निम्न भू कक्षा में 3000 किग्रा. प्रदाय भार पहुँचाने की भी इसकी क्षमता है। साथ ही साथ भू तुल्यकाली उपग्रह प्रमोचन यान (जी एस एल वी) जो इन्सैट-2 उपग्रह को (जो कि 2500 किग्रा. श्रेणी का उपग्रह है) अब से पाँच साल के अंदर प्रमोचन सेवाएँ देने के लिए अभिकल्पित है।

आइ एस आर ओ प्रमोचन वाहनों के विविध सापेक्ष आकार चित्र-1 में दिखाये हैं।

मिशन योजना :

प्रमोचन वाहनों के लिए मिशन योजना में प्रदाय उपग्रह भार, उसकी कक्षा, अनुमतीय कक्षीय

विक्षेपण, प्रमोचन स्थान और रेंज, उड़ान सुरक्षा सम्बन्धी व्यवरोधों पर विचार किया जाता है। प्रमोचन वाहन के चरणों की संख्या, प्रत्येक चरण की नोदन क्षमता, चरण व्यास और नोदक तंत्र एवं प्रमाणित नोदक उपकरण की उपलब्धता पर विचार, अन्य आवश्यक प्रौद्योगिकी की प्रगति-स्थिति और भविष्य में वृद्धि की संभावनाओं को ध्यान में रखकर किया जाता है। यदि उपग्रह तथा कक्षा सम्बन्धी क्षमताओं से सम्पन्न प्रमोचन वाहन पहले से उपलब्ध हैं तो मिशन योजना का कार्य केवल प्रक्षेप पथ उत्तमीकरण और रेंज/उड़ान सुरक्षा विचारों तक ही सीमित रहता है। उसके बाद रेडियो दृश्यता और अनुवर्तन अपेक्षिताओं को सुनिश्चित करने के लिए भू स्टेशन श्रृंखला को अंतिम रुप दिया जाता है। तत्पश्चात ऑन बोर्ड प्रणाली की परिभाषा और संरूपण को मिशन उद्देश्य के अनुसार निर्धारित किया जाता है।

ए एस एल वी एवं पी एस एल वी के बारे में एक संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है। तकनीकी दृष्टिकोण से तो ए एस एल वी एक पाँच चरणों वाला वाहन है, जिसके पाँचों चरणों में ठोस नोदकों का इस्तेमाल हुआ है। उपग्रह को, जो अंतिम चरण के ऊपर स्थित होता है, कुप्पेवाले धात्विक ताप कवच के अंदर रखा जाता है। ताप कवच निम्न दो मूल उद्देश्यों की पूर्ति करता है; (1) वायुमंडलीय भाग में रावेट्टों के उड़ान समय उपग्रह को वायुगतिक तापन से सुरक्षित रखना, तथा (2) वायुगतिक बल से उपग्रह को सम्भावित क्षति से बचाना है। ए एस एल वी के पाँच चरणों में अपना अपना नियंत्रण तंत्र है। वाहन में संवृत- पाश निर्देशन (नौसंचालन निर्देशन एवं नियंत्रण अनुच्छेद में देखे), उड़ान के दौरान स्वतन्त्र वर्तमान कालिक निर्णय तंत्र आदि अन्य प्रकार की तकनीकी विशेषताएँ भी हैं।

पी एस एल वी में पहली बार मुख्य नोदन तन्त्र में द्रव नोदन का इस्तेमाल किया जाएगा। यह एक चार चरण वाला राकेट है । इसमें छः स्ट्रैप-ऑन भी हैं, जो प्रथम चरण के कार्यकाल में ही कार्य करते हैं, ए एस एल वी की तरह स्वतन्त्र कार्य काल में नही। प्रथम एवं तृतीय चरणों में ठोस नोदक इस्तेमाल होता है जब कि द्वितीय एवं चतुर्थ चरणों में द्रव नोदक इस्तेमाल होता है। इसके अलावा सभी चरणों में स्वायत्त नियंत्रण तंत्र भी हैं। पी एल वी नियंत्रण की मुख्य विशेषताएं ये हैं; (1) द्वितीय एवं चतुर्थ चरणों में इंजन का गिम्बलन किया जाता है, (2) तीसरे चरण के नोज़ल को पिच नियन्त्रण के लिए फ्लेक्स किया जाता है, और (3) ए एस एल वी में प्रयुक्त अंतिम चरण के प्रचक्रण (स्पिन) के बदले पी एस एल वी में प्रदाय उपग्रह को कक्षा में प्रवेश के समय तक नियंत्रण तथा संवृत पथ निर्देशन में रखा जाता है। ए एस एल वी उड़ान में परीक्षित अन्य सभी प्रौद्योगिकियाँ पी एस एल वी में भी प्रयुक्त की जायेंगी।

रावेट्टों में बहुचरण की आवश्यकता क्यों पड़ती है? इस पर कुछ संक्षिप्त विवरण भी रोचक होगा। सिद्धान्ततः उपग्रहों के प्रमोचन के लिए हम एक चरण वाले राकेट का अभिकल्प दे सकते हैं लेकिन ऐसा एक चरणवाला राकेट बहुत अकुशल रहेगा। यह इसलिए होता है कि किसी भी नोदक के धारण के लिए एक पात्र (मोटर केस) अपेक्षित है । समुचित मात्रा में नोदक का उपयोग हो जाने पर भी, एक चरण वाले राकेट में पूरी मात्रा के नोदक पात्र को उठाना पड़ता है, जबकि बहुचरणीय राकेट में नीचे के चरणों के नोदक पात्रों को खाली होते ही छोड़ दिया जाता है और बेकार भार का उठाना बच जाता है जिससे राकेट की प्रदाय क्षमता बढ़ जाती है। आदर्शतः राकेट की प्रदाय क्षमता के उत्तमीकरण के लिए नोदक के उपयोग के समानुपात में मोटर केस के भागों को अलग करते रहना ही उचित है। लेकिन इससे उड़ान के दौरान खाली चरणों को पृथक करने तथा अगले चरण को चालित करने की क्रिया की संख्या बढ़ जाती है। यह क्रिया शत् प्रतिशत् विश्वसनीय नहीं होती जिससे राकेट की जटिलता बढ़ती है और विश्वसनीयता कम होती है। इस कारण, जी एस एल वी में केवल तीन चरण रखे गये है। वर्तमान काल में विश्व भर के वैज्ञानिक एवं इंजीनियर, उपग्रह प्रमोचन यान की विश्वसनीयता बढ़ाने के लिए 'एक चरण या दो चरण में कक्षा' प्रकार के राकेट के निर्माण के लिए कार्य कर रहे हैं। इसका एक लाभ यही भी है कि राकेट के बड़े भाग का पुनर्उपयोग किया जा सकता है। इस समय तो अमरीकी शटल यान को छोड़ कर यह भविष्य की एक रूपरेखा मात्र है।

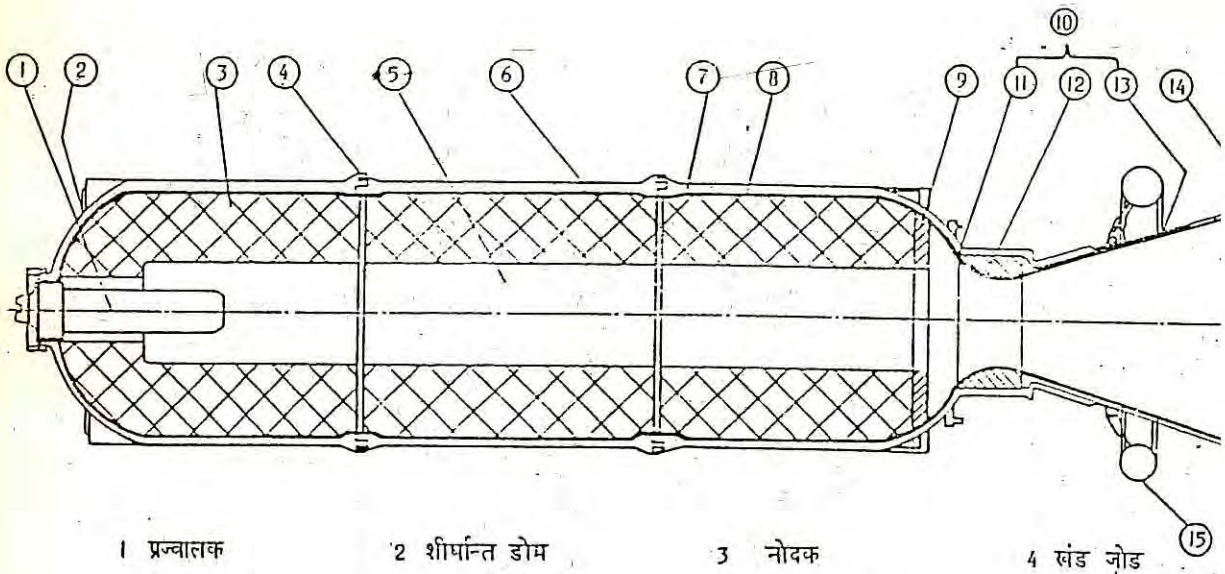

चित्र 2 - प्रतिरूपी ठोस रावेक्ट मोटर का अनुदैर्घ्य खंड

वायुगतिक अभिकल्प :

जब प्रमोचन यान वायुमण्डल के निम्न घने क्षेत्र से होकर जाता है तब विविध वायुगतिक बलों का सामना करता है। उदाहरणार्थ कर्षण बल पीछे धकेलकर यान के आगे के वेग को कम करता है और वैसे प्रदायभार को घटाता है। सामान्य वायु गतिक बल वाहन को 'नत' (tilt) और 'नम्य' (flex) करता है जो हवा के बल के साथ युग्मित होकर अभिनमन और कम्पन विक्षेप पैदा करता है। इन विक्षेपों से वाहन का प्रतिवेदन उसकी वायुगतिक स्थैतिकता और नम्यता पैरामीटर और आटोपाइलट क्षमता पर निर्भर करता है।

वायुगतिक बल के आकलन के लिए, पवन सुरंग के द्वारा 'छोटे अनुमानी मॉडल' पर प्रायोगिक मापन किए जाते हैं। बल और आघूर्ण "बल मॉडल" द्वारा आकलित किये जाते हैं जिसमें सभी बहिःसरण समाविष्ट होते हैं। दाब वितरण के माप के लिए पवन सुरंग परीक्षण, विशेषत: ताप कवच और स्ट्राप ऑन संलग्न क्षेत्रों में किया जाता है। परीक्षण सामान्यत: माक संख्या याने एम=03 से एम=5 (अवध्वानिक से पराध्वनिक) तक किया जाता है।

मिशन विश्लेषण और अनुरूपण :

नियत वाहन के प्राथमिक संरूपण और उसकी वायुगतिक पैरामीटर के आकलन पर, विस्तृत मिशन विश्लेषण किया जाता है। इसमें उड़ान अनुक्रम को निर्धारित करने, उड़ान मध्य भार और विक्षोभ का आकलन, चरण के धक्का रहित गतिक पृथक्करण, गतिक अध्ययन, ताप कवच पृथक्करण प्रणाली, उड़ान में अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं का अध्ययन, प्रदाय भार

और कक्षा सम्बंधी क्षमता का आकलन, पृथक किए हुए चरणों का पृथ्वी पर लौटने के स्थानों का अनुमान तथा दूरमिति और रेंज अनुवर्तन नेटवर्क की अपेक्षिताओं का निर्धारण भी शामिल हैं। विस्तृत अनुरूपण कंम्प्यूटर प्रोग्राम राकेट के रैखीक और कोणीय गति, उचित गुरुत्व के मॉडल, तथा नौसंचालन और नियंत्रण तंत्रों को समाविष्ट करते हैं। ऐसे अनुरूपण के मुख्य लक्ष्यों में से एक है, लिफ्ट आफ़ से अन्तरिक्ष यान पृथक्करण तक यान के साधारण और असाधारण निष्पादन के परिणामों का मूल्यांकन करना।

प्रमोचन वाहन अभिकल्प :

एक बार प्रमोचन वाहन का संरूपण निश्चित हो जाने पर वाहन प्रणाली के विस्तृत अभिकल्प का कार्य होता है। कुछ अभिकल्पों का संक्षिप्त विवरण यहां दिया गया है।

नोदन तंत्र :

यान के संरूपण का अंतिम रुप देते ही, नोदन मोड्यूल के अभिकरण के पैरामीटर निश्चित किये जाते हैं-जैसे मोड्यूल का प्रकार (ठोस या द्रव), प्रणोद भार, नोदन बल का समय के साथ परिवर्तन, नोज़ल निर्गम/कंठ क्षेत्र अनुपाम आदि। चित्र-2 में ठोस नोदक मोटर के विभिन्न भाग दिखाये गए हैं।

(अ) राकेट मोटर केस सामग्री :

एस एल वी-3 के पहले और दूसरे चरण में उपयोगित मोटर केस सामग्री 15 सी डी वी 6 नाम की एक विशिष्ट स्टील है, और तीसरे और चौथे चरण के केस की सामग्री ग्लास एपोक्सी संयुक्त है। तीसरी उड़ान से चौथे चरण की सामग्री ग्लास एपोक्सी से केवलार एपोक्सी संयुक्त में बदला गया था। वी एस एस सी ने संयुक्त उत्पादन के लिए प्रक्रम प्रौद्योगिकी तथा अभिकल्प विकसित कर लिये हैं।मोटर केस धात्विक सामग्री एम 250 ग्रेड मारेजिंग स्टील एलॉय जिसकी अन्तिम तनन शक्ति बहुत उच्च है अब देश में बनाई जाती है, यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इसका विकास 80 दशक के मध्य हुआ। अब पी एस एल वी के पहले चरण के मोटर केस में एम 250 सामग्री ही प्रयुक्त की जा रही है। वी एस एस सी ने भारतीय उद्योग के साथ मिलकर इस एलॉय का विविध रुप में उत्पादन करने के प्रबन्ध कर लिए हैं। साथ ही राकेट मोटर के निर्माण का कार्य भी, जिनमें विशिष्ट फ़ोर्जिंग मशीनन, वेल्डन और ताप अनुकूलन प्रक्रम शामिल हैं, भारतीय उद्योग को सौंप दिए हैं।

(ब) नोदक

गत वर्षों में वी एस एस सी ने ईंधन, बाइन्डर, पोलीमर के आधार पर संयुक्त ठोस नोदक की एक श्रृंखला को विकसित किया हैं। आइ एस आर ओ पोलियोल, एच इ एफ-20 (एक उच्च श्रेणी ईंधन), सी टी पी बी (कारबोक्सिल टेरमिनेटइ पोलीब्यूटाडिन) और एच टी पी बी (हायड्रोक्सिल टेरमिनेटड़ पोलीब्यूटाडिन) इन में शामिल हैं।

नोदक बाइन्डरों पर अनुसंधान के फलस्वरुप अनेक पोलीमेरिक सामग्रियाँ और रसायनों, जैसे, एरोमेटिक, पोलियरामइड् (कवलार जैसी) एरोमेटिक पोलियामाइड् (कापटोन टाइप), आसंजक, "सीलैन्टस्"और पोटिंग संयुक्त को भी विकसित किया हैं। इन्हें परिज्ञापी राकेट और उपग्रह प्रमोचन यान में ही नहीं, बल्कि उपग्रह प्रणाली और अंतरिक्ष यान (एप्पल) में भी प्रयुक्त किया गया है।

(स) तुंड (नोजल)

ठोस राकेट नोदन का सम्बन्ध नोदन भार के अभिकल्प और संविरचन, तथा प्रज्वलन से है, तुंड तंत्र से जिसके द्वारा 2500 से 3000° सें. के समीप ताप वाले दहन उत्पादकों को पराध्वनिक गति को त्वरीत किया जाता है। तुंड का विकास प्रारंभिक दिनों के सरल धातु और ग्रैफाइट निर्माण से होकर ग्रैफाइट और एस्बेस्टस फीनोलिक अपरक्षक आस्तरक से, कार्बन फीनोलिक् और सिलिका फीनोलिक अपरक्षक आस्तरक तक प्रगति कर गया है।

(ii) संरचनात्मक अभिकल्प

मुख्य संरचनात्मक प्रणाली में बेस आवरण, मोटर केस अंतराचरण संरचना उपकरण डेक और तापकवच शामिल हैं। ये प्रमोचन वाहन के मुख्य भाग सीधे अक्रिय भार के अंग हैं। अतएव अभिकल्प का लक्ष्य है ऐसे संरचनाओं के भार को निम्नतम करना और साथ ही साथ उड़ान के समय उस पर लगे भार को (अक्षीय, अपरूपण और बंकन आघूर्ण, स्थैतिक और गतिक) दोनों को सह सकना। आरोहन के समय वाहन

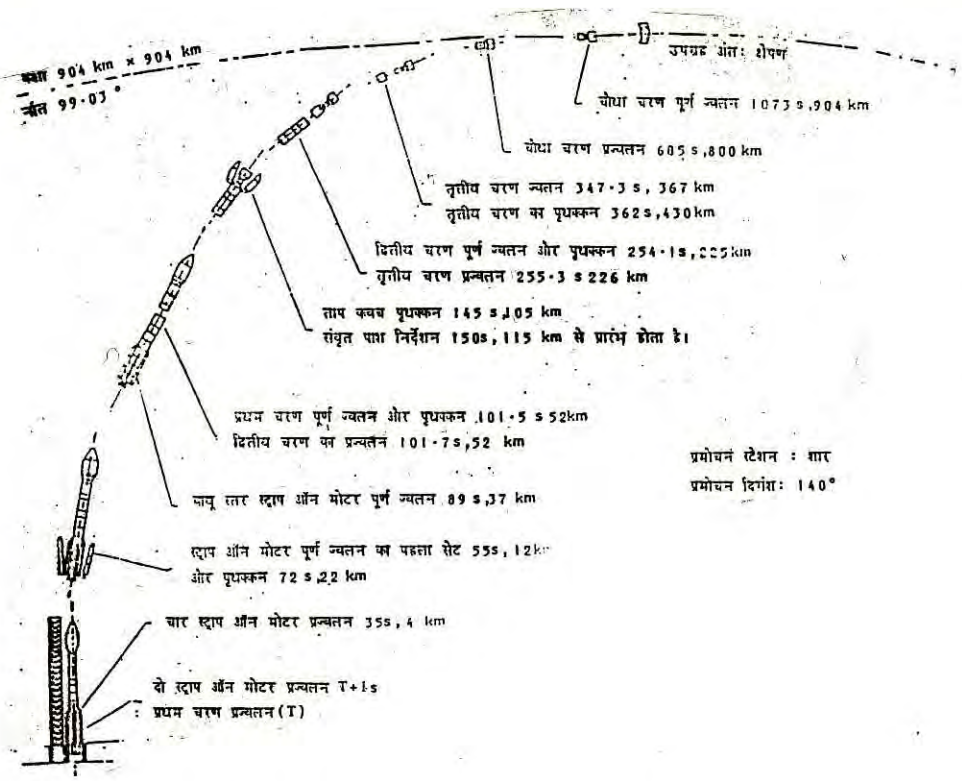

चित्र 3 - पी एस एल वी के लिए प्रायोगिक उड़ान अनुक्रमण
सूर्य तुल्यकाली ध्रुवीय कक्षा (SSO)

पर आने वाले भार का आकलन उड़ान के विविध क्षणों में अनुरूपण द्वारा परिकलित वायुगतिक भार, वास्तविक नियंत्रण बल और त्वरण, और सभी संभव विक्षोभ जिसमें स्थिर झोंका और अपरूपण झोंका भी शामिल हैं, सहित किया जाता हैं। अन्त में संरचना का अभिकल्प भार सुरक्षा को उपयुक्त मात्रा में धारण करके ही किया जाता हैं। इन संरचना के लिए हल्के एलॉय जैसे अल्यूमिनियम एलॉय तथा उच्च शक्ति "स्टील" जैसे मारेजिग स्टील का उपयोग किया जाता है।

(iii) तापीय अभिकल्प

वाहन का तापीय अभिकल्प वायुगतिक अभिकल्प के सादृश्य है और वायुगतिक तापन की गणना पर आधारित है। विशद विश्लेषण द्वारा प्रवाह के कारण तापमान पर हुई वृद्धि को पहले अभिकलन किया जाता है। तापीय अभिकल्प का मुख्य लक्ष्य तापमान में विशेषतया ताप कवच के अन्दर के भाग में हुई वृद्धि को सीमित करना है। इसके लिये उचित तापीय सुरक्षा प्रणाली तैयार की गई है। "कोर्क लिगिंग" और विशेष पेन्ट जिसके उदाहरण हैं। जो भी तंत्र चुना गया हो उसे एक गतिक ताप अनुकरण सुविधा के जरिए अनिवार्यत: जाँचा जाता है।

(iv) नौसंचालन, निर्देशन व नियंत्रण (एन जी सी) प्रणाली

प्रमोचन वाहन के किसी भी अभिकल्प में दो मुख्य मुद्दे होते हैं, प्रदायभार और कक्षीय अंतक्षेपण की यथार्थता। एक तरफ बहुचरणी नोदन तंत्र प्रदायभार क्षमता को निर्धारित करता है तो दूसरी तरफ नियंत्रण, नौसंचालन व निर्देशन तंत्र अन्तक्षेपण की यथार्थता को

निर्धारित करते हैं। स्वचालित नियंत्रण व निर्देशन तंत्र के द्वारा उड़ान मध्य स्थायीकरण-वाहन का कोणीय स्थिति निर्धारण-और असके पथ को प्रमोचन मंच से कक्षा में अन्तक्षेपण तक निर्देशन कार्य शामिल है। नियंत्रण तंत्र अति सूक्ष्म कोण और कोणीय गति संवेदक, अभिकलन इलेक्ट्रॉनिकी, एवं नियंत्रण प्रणोदक का इस्तेमाल करते हैं। आटोपाइलेट अपेक्षित तात्क्षणिक अभिवृत्ति मूल्यों को उपलब्ध कराता है तो निर्देशन तंत्र अपेक्षित उड़ान को शुद्ध कक्षा में अन्ततः डाल देने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। निर्देशन तंत्र नौसंचालन तंत्र को "संवेदक" के रुप में नियोजित करके वाहन के तात्क्षणिक वेग और स्थिति को संसूचित करता है तथा वाहन अभिवृत्ति को लगातार पुनःपरिकलित करके शेष पथ की रूपरेखा तैयार करता हैं। नौसंचालन तंत्र सामान्यतः जडत्वीय त्वरण और उच्च गति के अति सूक्ष्म परिमाण वाले तीन घटकों, के मापन तथा उच्च वेग से उच्च यथार्थतामय अभिकलन द्वारा तय की गई दूरी का आकलन करता है। अतः नौसंचालन, निर्देशन व नियंत्रण तंत्र प्रमोचन वाहन प्रौद्योगिकी में अति निर्णायक एवं चुनौतिपूर्ण क्षेत्र हैं।

नौसंचालन तंत्रों के प्रकार :

नौसंचालन तंत्र या तो पी एल वी में प्रयुक्त एक अतिरिक्त स्ट्रैप डाउन जडत्वीय नौसंचालन तंत्र के रुप में होता है अथवा ए एस एल वी में प्रयुक्त एक स्थायीकृत प्लेटफार्म जडत्वीय नौसंचालन तंत्र के समान।

नियंत्रण प्रणाली :

विभिन्न नियंत्रण प्रणालियां वाहन के हर एक चरण में आवश्यक अपेक्षित बल को, उत्पन्न करने के लिए लगायी जाती हैं। विविध नियंत्रण प्रणोद जैसे द्वितीयक इन्जेक्शन प्रणोद सदिश नियंत्रण (एस आइ टी वी सी), इंजन गिम्बल नियंत्रण तंत्र, फ्लेक्स तुंड (नोज़ल) नियंत्रण तंत्र और बंद-चालू प्रकार के प्रतिक्रिया नियंत्रण तंत्र (आर सी एस) हमारे प्रमोचन वाहनों में प्रयुक्त हैं।

निर्देशन तंत्र के यंत्र सामग्री पाश अनुरूपण :

यंत्र सामग्री सहित अनुरूपण (एच एल एस) निर्देशन श्रृंखला के विविध उड़ान से पूर्व अनिवार्य परीक्षणों में से है जो वास्तविक काल पर्यावरण में सभी यंत्र सामग्री एवं गणन सामग्री तत्वों के समस्त अभिकल्प एवं समाकलित निष्पादन का सत्यापन करके उड़ान योग्यता का मूल्यांकन करता हैं। साथ साथ एच एल एस उपतंत्रों में यदि कोई कमियाँ हैं तो उसे भी हटाने में सहायता करता हैं। विविध उपतंत्रों के सुसंगति सुनिश्चित करता है, भू आधारित जाँच-मंडल तंत्र के साथ उनके अंतरापृष्ठ नाभीय असफल स्थितियों की जाँच करता है। पी एस एल वी का प्रतिरूपी उड़ान अनुक्रम चित्र-3 में दिया गया हैं।

(v) इलेक्ट्रॉनिकी तंत्र

एक उपग्रह प्रमोचन वाहन के इलेक्ट्रॅनिकी तंत्र में मुख्यतया दूरमिति, अनुवर्तन व दूरादेश (टी टी सी) उपतंत्र शामिल हैं। इसके अलावा कुछ सहायक माड्यूल (प्रतिरूपक) जैसे शक्ति प्रतिबंध (पावर कंडिषनेर्स) एवं नियामक, निर्देशन तंत्र एवं नियंत्रण शक्ति सयंत्रों के बीच के अन्तरापृष्ठ भी इसमें शामिल हैं।

दूरमिति :

वाहन की उड़ान के दौरान चुने हुए पैरामीटरों को मापना, उन्हें समान वैद्युत में बदलना और उसके बाद उन्हें भूमि को भेजना यही दूरमिति के अन्दर आनेवाले कार्य है। अतः दूरमिति में कई क्षेत्र हैं जैसेः यंत्रीकरण, संचार, सूचना सिद्धांत एवं दत्त संसाधन।

दूरादेश :

प्रमोचन वाहनों के अपने उड़ान काल में पृथ्वी से प्रमोचन वाहनों तक अनुदेश (सामान्यतः इसे आदेश कहते हैं) भेजने के लिए यह प्रयुक्त होते हैं।

अनुवर्तन :

यह ऐसी एक प्रक्रिया है जिस से अंतरिक्ष में वाहन की तात्क्षणिक स्थिति भूमि से निर्धारित की जा सकती है। जब अनुवर्तन के लिए इस्तेमाल रडार केवल प्रमोचन वाहन द्वारा परावर्तित या प्रकीर्णित विद्युत चुंबकीय ऊर्जा पर निर्भर करता है तब रेंज करीब 50 से 100 कि.मी. तक सिमित होती है। जब विद्युत रेंज को तय करना है तो रेडार की अनुवर्तन क्षमता एक युगपत प्रेषानुकर के इस्तेमाल से बढ़ाई जाती है।

विश्वसनीयता और गुणता आश्वासन :

विश्वसनीयता, एक सांख्यिकीय प्रणाली है

जो प्रयोक्ताओं को यह संकेत देती है कि प्रदत्त सेवा व्यवस्थाओं के अन्दर तंत्र संतोषजनक स्वरूप से कार्य कर सकता है या नहीं। यह गुणता से भिन्न है, क्योंकि गुणता से यह पता चलता है कि एक तंत्र डिजाइन निर्माण, परीक्षण एवं मूल्यांकन प्रक्रियाओं के अनुबंधों के नितान्त अनुकूल बना है। इस दिशा में किये प्रयासों को बिल्कुल विश्वसनीयता और गुणता आश्वासन प्रबंधन (आर एण्ड क्यू ए) कह सकते हैं और सह संविरचन, परीक्षण, अभिकल्प की आलोचनात्मक समीक्षा और उड़ानोत्तर विश्लेषण के जरिए वैचारिक अभिकल्प से लेकर प्रमोचन वाहन के निर्माण तक के सभी चरणों के अभिकल्पों को शामिल करते हैं। गत वर्षों में इसरो ने आर एण्ड क्यू ए की आचार पद्धति के सख्त अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक अवसंरचना स्थापित की है।

वर्तमान स्थिति :

इसरो ने प्रमोचन वाहन तंत्रों में एक उच्च स्तर का स्वावलम्बन अर्जित कर लिया है। वस्तुत: एस एल वी-3, ए एस एल वी और पी एस एल वी के लिए कोई भी बनाये गये माड्यूल या उप तंत्र आयात नहीं किये जाते हैं। अत: इसरो की प्रमोचन वाहन प्रौद्योगिकी पूर्ण रूप से भारतीय जानकारी और भारतीय उद्योग के उत्पादीकरण पर आधारित है। तंत्र स्तर पर, हर एक तंत्र की गुणता भू परीक्षण द्वारा सुनिश्चित कर ली गई है। इसरो अब ए एस एल वी को परिचालित करने तथा विकासात्मक उड़ान परीक्षणों से पी एस एल वी को परिचालन योग्य बनाने का काम कर रहा है।

पी एस एल वी का सफल परीक्षण होते ही हमारी तुल्यकाली प्रमोचन क्षमता भी लगभग सिद्ध हो जाएगी, क्योंकि पी एस एल वी में भी उपग्रहों को भूतुल्यकाली भू कक्षा में छोड़नें की क्षमता है। हाँ, ऐसे उपग्रह 500 कि.ग्रा. से अधिक भारी नही हो सकेंगे, जबकि इन्सैट-2 करीब 2000 कि.ग्रा. भार वाला है। इन्सैट-2 श्रेणी के उपग्रह को उसकी अपनी कक्षा में छोड़ने के लिए में पी एस एल वी से बड़े वाहन की आवश्यकता है। इसरो द्वारा जी एस एल वी (भू तुल्यकाली प्रमोचन यान) नामक एक वाहन का संरूपण हो चुका है और उसका विकास प्रगति में है। यह पी एस एल वी के बड़े ठोस नोदक बूस्टर का इस्तेमाल करेगा। साथ ही पी एस एल वी के दूसरे चरण के द्रव मोटर का अपने दूसरे चरण तथा स्ट्रैप ऑन के रुप में भी इस्तेमाल करेगा। जी एस एल वी के अभिवर्धक, और नियंत्रण व निर्देशन तंत्र पर पी एस एल वी की परम्परागत विश्वसनीयता होगी। तीसरा चरण नोदक के रुप में तरल हाइड्रोजन और तरल आक्सीजन का उपयोग करेगा। इस चरण का, जिसके लिए अतिरिक्त प्रौद्योगिकियाँ भी अपेक्षित है, निर्माण प्रारंभ हो चुका है। जी एस एल वी का प्रथम विकास प्रमोचन 1995-96 की अवधि में किये जाने की योजना है। इस वाहन को इन्सैट-2 से बडे उपग्रहों के प्रमोचन की क्षमता की संभावना भी प्रशस्त है। इस वाहन के एक छोटे प्रतिरूप को भी 1500 कि.ग्रा. श्रेणी के भू-तुल्यकाली उपग्रहों को कक्षा में छोड़ने की क्षमता है। जी एस एल वी का छोटा प्रतिरूप प्रस्तावित ग्रामसैट के, जो मुख्यत: ग्रामीण विद्या एवं विकास पर लक्षित है, प्रमोचन के लिए प्रयुक्त होगा।

भविष्य की एक झलक :

प्रमोचन वाहन प्रौद्योगिकी में पूर्ण एवं दीर्घकालिक स्वावलम्बन लाने के लिए इसरो के कटिबद्ध होने के कारण यह सुनिश्चित करना है कि उसने जो परिवहन व्यवस्था विकसित की है उसकी विश्वसनीयता एवं कीमत जगत प्रतिस्पर्द्धी हो। वायु श्वसन नोदन तंत्र, अभिवर्धक अनुप्राप्ति और पुनर्उपयोग, त्रुटि सहनशक्ति एविआनिकी जैसी कुछ उन्नत तकनीकी पर अनुसंधान एवं विकास प्रयास वाहन की विश्वसनीयता बढ़ाने और कीमत में कमी लाने में सहायक होंगे। उदाहरण के लिए वायु श्वसन, नोदन प्रौद्योगिकी ठोस राकेट मोटर के विशिष्ट आवेग को 50-100% तक बढ़ा सकती है। द्रव इंजनों में यह सुधार 5-10 गुणा हो सकता है अत: उपर्युक्त क्षेत्रों में विकास कार्य को बढ़ाना युक्तिसंगत है। वास्तव में इसरो परिज्ञापी राकेटों में वायुश्वसन विशिष्टताओं को समाविष्ट करके सफलतापूर्वक प्रमोचन करके इस क्षेत्र में एक छोटी शुरुआत कर चुका है।

शेष पृष्ठ 25 पर

किशोर अवस्था की आवश्यकताएँ और समस्याएँ *

श्रीमती कालिंदी मुझुमदार
उपप्राचार्य (सेवानिवृत्त)
कॉलेज ऑफ सोशल वर्क,
निर्मला निकेतन, बंबई

यूं तो हर अवस्था का अपना एक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण होता है। किशोरावस्था के आगमन के साथ प्राणियों में होने वाले जैविक परिवर्तनों की भूमिका विशेष महत्व की है क्योंकि यह वह कालावधि है जो युवा वर्ग के भविष्य पर सीधा प्रभाव डालती है। इस अवस्था की प्रमुख आवश्यकताओं एवं समस्याओं से जुड़े कुछ अहम मुद्दों पर सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक विचार इस लेख में दिए गए हैं।

मशहूर मनोवैज्ञानिक फ्रॉयड और एरिक एरिक्शन के सिद्धांतो के अनुसार मनुष्य के भावनात्मक विकास की कई अवस्थाएं होती हैं। जिस तरह बचपन से बुढ़ापे तक बदन में भिन्न भिन्न परिवर्तन होते रहते हैं, उसी प्रकार मनुष्य के भावनात्मक जीवन में भी अनेक बदलाव आते हैं। इन विभिन्न परिवर्तनों के माध्यम से मानव का मानसिक और सामाजिक विकास होता है। वह अपने विचार, बर्ताव और भावनाओं पर काबू पा सकता है। अपने परिवार, मित्र सहेलियों के साथ मिलजुलकर सामाजिक मूल्यों के अनुसार जिंदगी बिता सकता है। भावनाओंके विकास की आठ स्थितियां या अवस्थाएं होती है। हर एक अवस्था में मानव को एक निश्चित कार्य करना है, या एक खास जिम्मेदारी निभानी है। यदि ऐसा नही हो पाता है तब दूसरी अवस्था में पदार्पण करते समय दुविधा होती है और अंत में मनुष्य के व्यक्तिमत्व पर इस अधूरे विकास का बुरा प्रभाव होता है। जैसे कि, बाल्यावस्था में बालक बिलकुल बेसहारा होता है। वह अपने परिवार के बुजुर्गों पर पूरी तरह निर्भर रहता है । उसके मूलभूत आवश्यकताओं पर यदि नियमित ढंग से ध्यान दिया जाय तो उस बालक में आत्मविश्वास पैदा होता है और साथ ही साथ अपनी छोटी सी दुनिया पर भी वह यकीन करता है। निराश्रित बालकों मे आत्मविश्वास की कमी नजर आती है और वे दुसरों पर भी आसानी से विश्वास नही रख पातें हैं ।

इन आठ अवस्थाओं में एक किशोरावस्था है जो 14 से 19 वर्ष के बीच होती है।

किशोरावस्था :

इस उम्र में कई परिवर्तन होते हैं। बदन तेजी से बदलता है। लड़के और लड़कियों के बदन में युवावस्था में पदार्पण करने की तैयारियां होती है। लड़कियों में मासिक स्राव के चक्र की शुरुआत होती है और लड़को में वीर्यपतन होने लगता है।

एक दूसरे के प्रति लैंगिक आकर्षण इस उम्र की स्वाभाविक निशानी है। लैंगिक इच्छा तीव्र होने लगती है। भावनाओं में चंचलता दिखाई देती है। शांति, समाधान, निराशा, नाराजगी इत्यादि भावनाएं विचित्र महसूस की जाती हैं। युवावस्था में शरीर में जो रसायन बनता है उसका यह नतीजा है।

युवक/युवतियां जीवन के तथ्यों पर सोचने लगते हैं। इस उम्र में वे और अन्य रिश्तेदारों के स्वभाव बिना सोचे अपनाना नही चाहते। कई तथ्यों के संबंध में बुजुर्गों को अनेक सवाल वे पुछतें हैं। जैसे अपनी मां से पूछते हैं कि पूजापाठ, व्रत वगैरह क्यों करती हैं ? उसका प्रयोजन क्या है ?अपने रीतिरिवाज का पालन क्यों करना है ?दुनिया में भगवान है या नहीं ?यदि भगवान है तो इतनी गरीबी, बेकारी, अत्याचार क्यों है ? इन सवालों के जवाब देने के लिए और युवक/युवतियों को समझने के लिए उनकी आवश्यकताओं और समस्याओं पर ध्यान देना जरूरी है।

---

* "मानव स्वास्थ्य के कुछ आयाम" एक दिवसीय संगोष्ठी (15 मार्च 1993) में प्रस्तुत वार्ता पर आधारित

किशोरावस्था की आवश्यकताएं और समस्याएं

(1) व्यक्तित्व का मजबूती से स्थापन करना :

युवक/युवतियों को अपने खुद के विचारों को व्यक्त करने कि इच्छा होती है और यह उनका हक भी है। शादी, राजनीति, शिक्षा, महिलाओं का समाज में स्थान इत्यादि विषयों पर वे अपने विचार व्यक्त करने लगते है। ये विचार पुरानी पीढ़ी के विचारों से अलग भी हो सकते हैं। लेकिन माँ/पिताजी यदि अपने बेटे/बेटियों को जबरदस्ती से बुजुर्गों की मान्यताओं सें प्रभावित करना चाहतें हैं, तो संघर्ष होना स्वाभाविक होता है। जीवन के मूलभूत मूल्य, सामाजिक और पारिवारिक मूल्य तथा नियम युवकों को समझाने की जरुरत है। लेकिन यह भी सच है कि हम उनकी खुद की मान्यताओं को समझनें की कोशिश करें। इन मामलों में तथा अन्य मुद्दों पर भी समझौते की आवश्यकता हमें मंजूर करनी है।

(2) व्यवसाय निश्चित करना :

यह बड़ा कठिन काम है। आजकल अनेक तरह के व्यवसाय, विशेषत: बड़े शहरों में उपलब्ध हैं। उनमें से एक व्यवसाय ढूंढ के उसको निर्वाह का माध्यम बनाने की जिम्मेदारी युवक/युवतीयों पर हैं। इस कार्य की नींव किशोराव्यस्था में ही डाली जाती है। अपने पसंद का व्यवसाय ध्यान में रखते हुए उसके अनुसार स्कूल और कॉलेजों में खास विषय चुनने की आवश्यकता है। यह काम आसान नही हैं। इन छात्रों को व्यवसाय मार्गदर्शन देने की जिम्मेदारी मां-पिताजी और शिक्षकों पर है। बडे शहरों मे छात्रों की बौद्धिक और भावनात्मक क्षमता मापने के साधन तथा तंत्र भी उपलब्ध हैं। उनका इस्तेमाल करने से उपयुक्त व्यवसाय ढूंढने में मदद होगी। लड़कियों को व्यावसायिक शिक्षा देना अति आवश्यक है। आजकल महिलाओं पर परिवार और समाज के जो अत्याचार हो रहें है, उन्हे ध्यान में रखते हुए लड़कियों को स्वावलंबी बनाना चाहिए। बम्बई में लघु उद्योग का प्रशिक्षण लेने की सुविधाएं है। यदि किसी युवक/युवती को कॉलेज की शिक्षा नही लेनी हैं तो वे इन सुविधाओं का इस्तेमाल कर सकतें है।

(3) विवाह की पूर्व तैयारी :

किशोरावस्था में लैंगिक इच्छा तेज होती है। लड़के-लड़कियों में शारीरिक आकर्षण प्रबल होता है। लेकिन इन्हें लैंगिक शिक्षा, जीवन शिक्षा और जनसंख्या शिक्षा सही तरीके से नही दी जाती है। लड़के अपने भाई, मित्र तथा किताबों सें लैंगिक विषयों पर जानकारी हासिल करते है। यह जानकारी कितनी हदतक शास्त्रागत तथा उपयुक्त तथ्यों पर आधारित है, यह जानना मुश्किल है। इसके अलावा फिल्मों का भी काफी असर इस उम्र में होता है। समाज के बंधनों के अनुसार लड़कियां लैंगिक/जीवन/लोकसंख्या शिक्षा सें वंचित रहती हैं। कई स्कूलों में और कॉलेजों में इन विषयों पर जानकारी देने के प्रयास जारी है। लेकिन यह शिक्षा देने के लिये उचित व्यक्ति तथा ढंग का इस्तेमाल किया जाता है या नही यह देखना जरूरी है।

परिवार में बेटी/बेटों को लैंगिक शिक्षा देना अतिआवश्यक है। सदियों सें अनौपचारिक ढंग से बुजुर्ग यह शिक्षा देते आयें है। लेकिन ढंग से बयान देते हुए योग्य मार्गदर्शन करने की जरुरत है। मां, पिताजी और अन्य रिश्तेदारों का एक दुसरें के प्रति बर्ताव इस शिक्षा का अति उत्तम माध्यम है। परिवार में संघर्ष क्यों होता है ? कौन इसकी शुरुआत करता है ? किस तरह से संघर्ष मिटाये जाते है ? इन सब प्रक्रियाओं का गहरा असर यौवनावस्था में पदार्पण करने वाले बेटे/बेटियों पर होता है। वे अपने भविष्य के वैवाहिक जीवन की नींव इसी पर डालते है। यह यही नही है कि सभी बुजुर्ग आदर्श हैं। आदर्श की संकल्पना के मुताबीक बर्ताव करना उनका कर्तव्य है। लेकिन उनसे गलतियां होंगी, यह स्वाभाविक है। ऐसे प्रसंग में गलतियां स्वीकार करते हुए अपने को सुधारने की चेष्टा करनी चाहिये। उदाहरणार्थ यदि पिताजी सिगरेट पीते हैं या घर में मारपीट होती है, कलह रहता है इत्यादि, तो ऐसे बर्ताव को सुधारना ही चाहिए।

जवान बेटे/बेटियों की शादी तय करते समय उनकी राय लेनी चाहिये, विशेषत: लड़कियों की (क्योंकी लड़कों की राय तो लेते ही हैं)। जबरदस्ती किसी की शादी नही करनी चाहिये। शादी तय करते समय सिर्फ जन्म पत्रिका देखना काफी नही है। वर-वधूका स्वभाव, आदतें, जीवनमूल्य, व्यवसाय, शिक्षा, परिवार की आर्थिक/सामाजिक पार्श्वभूमि

इत्यादि मुद्दे महत्वपूर्ण हैं। डॉक्टरों का कहना है कि खून की भी जाँच करवानी चाहिये ताकि मधुमेह, आर एच् फेक्टर तथा अन्य बीमारी/वस्तुस्थिती की जानकारी हो जाय।

युवक/युवतियों को शादी का अध्यात्मिक, मानसिक और सामाजिक मतलब समझाना चाहिये। कई जाति/जमातियों में आज भी कानून के खिलाफ बेटियों की शादी 18 साल से पहले की जाती है। इसके कई बुरे असर होते है। बेटियां कम उम्र में शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक तौर से मातृत्व के लिए परिपक्व नही होती है। इसका नतीजा प्रजोत्पादन और वैवाहिक जीवन पर होता है।

शादी से पहले परिवार नियोजन का महत्व, मतलब और साधनों के बारे में जानकारी लड़के/लड़कियों को देनी चाहिये। इसके साथ साथ पति पत्नि की भूमिका, परिवार के अन्य सदस्यों के साथ बर्ताव कैसे करना, संतुलित आहार का महत्व और खाना पकाने के उचित तरीके, परिवार में संघर्ष मिटानें के तरीके, निर्णय लेने के तरीके इत्यादि विषयों की शिक्षा सभी जवान लड़के/लड़कियों को देनी चाहिये। हमारे समाज में महिलाओं को निम्न स्थान दिया जाता है। परिवार की पूरी जिम्मेदारी (उदरनिर्वाह के साधन के अलावा) महिलाओं पर डाली जाती है। ये रिवाज अभी बदलने का समय आया है। घर के काम की जिम्मेदारी पति और पत्नि दोनों पर है।

आजकल हमारे समाज में महिलाओं पर अत्याचार तेजी से बढ रहे हैं। दहेज के कारण अनेक महिलाओं का बलिदान होता है। इसलिये शादी के समय दहेज लेना/देना नही चाहिये। मां-पिताजी सोचते हैं की दहेज देने से हमारी बेटी ससुराल में सुखी रहेगी। यह सोचना गलत है। सामाजिक कार्य कर्ताओं के अनुभव के अनुसार दहेज से ससुराल के सदस्यों में ज्यादा लालच पैदा होता है। यदि अपनी बेटी को माँ/पिताजी प्यार से कुछ उपहार देना चाहेंगे तो ये स्त्रीधन के नाते से दिया जा सकता है। कानून के मुताबिक यह स्त्रीधन शादी के छः महीने के अंदर पत्नी के नाम पर करना चाहिए।

लड़कियों की सामाजिक कार्य की संस्थाओं की जानकारी देनी चाहिये ताकि अत्याचार के मामले में इनके जरिये मार्गदर्शन उन्हें मिल सके।

किशोरावस्था के लड़के/लड़कियां और मां/पिताजी के बीच में मैत्री भाव होना जरूरी है। इसी मैत्री भाव के माध्यम से हम अपने भविष्य की पीढ़ी को आदर्श जीवन की दिशा की ओर चलने हेतु प्रेरित कर सकते हैं।

♣♦♣♦

पृष्ठ 22 से आगे

अन्य देशों द्वारा इस क्षेत्र में किये जाने के लिए आयोजित कार्यक्रम को देखें तो शायद यह सुराग मिलेगा कि आनेवाली शताब्दी के पहले वर्षों में विश्व में उपग्रह प्रमोचन यानों का क्या रूप होगा। पूर्ण रूप से पुनःप्रयुक्त एकल चरण से कक्षा में जाना और वापस आना शायद प्रचलित हो जाए। दो चरण वाहनों में शायद वायु श्वसन हाइड्रोजन इंजनों का उपयोग हो जो अंतरिक्ष परिवहन खर्चों को पाँच गुने या अधिक कम कर सकें। ऐसे अंतरिक्ष वाहन का जो लगभग साधारण दौड़ पथ से चढ़ और उतर सके, उच्च वायुगति तापन को झेलना पड़ेगा, जिससे तप्त संरचना के लिए उन्नत पदार्थों के विकास की आवश्यकता पड़ेगी। उन में से कुछ प्रत्याशी पदार्थ ये है: द्रुत पिंडित मिश्र धातु (एलॉय) पदार्थ, धातु आव्यूह (मैट्रिक्स) संयुक्त और कार्बन-कार्बन संयुक्त। उसी प्रकार व्यवहार्य उपग्रहों एवं अंतरिक्ष प्लेटफार्मों में मिलन स्थान, डॉकिंग व विकक्षण की प्रौद्योगिकियाँ, रोबोटकी और दूर विज्ञान के साथ अधिक प्रासंगिक बनेंगी। सूक्ष्म गुरुत्व, खगोलिकी और भू प्रेक्षण के क्षेत्रों में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से बड़े पैमाने पर कार्यक्रम की संभावना है।

एविआनिकी में त्रुटि सहनशील नौसंचालन, निर्देशन व नियंत्रण तंत्र एवं टी टी सी का इस्तेमाल किया जाना होगा। बड़े पैमाने पर समाकलित एवं अति उच्च गतिवाले परिपथों एवं सहायक नौसंचालन, कृत्रिम बौद्धिक एवं विशेषज्ञ जैसे तंत्रों के बढ़ते उपयोग लक्षित है।

अगले दशाब्दी में ऐसे ग्रहीय मिशन भी हों जिन में परमाणुशक्ति पर आधारित पावर स्रोतों, स्वायत्त अंतरिक्ष वाहन प्रचालन और गहन अंतरिक्ष संचार एवं अनुवर्तन के विकास अपेक्षित हैं। इन क्षेत्रों में से कुछ उपयुक्त क्षेत्रों को चुनकर उन पर अनुसंधान और विकास कार्य प्रारंभ करना आवश्यक होगा।

♣♦♣♦

कैसी है शोर की विडम्बना

डॉ. डी. डी. ओझा
ब्रह्मपुरी हजारी चबूतरा, जोधपुर

शोर जनित प्रदूषण अन्य पर्यावरणीय प्रदूषणों के मुकाबले गौण नहीं है । यह भी प्राणी जगत को सीधे रूप में प्रभावित करता हैं । इसके स्त्रोत, उनकी सीमाएं, दूरगामी प्रभाव एवं बचाव का विवेचन इस लेख में किया गया है ।

शोर का चक्रव्यूह हमें चारों ओर से घेरे हुए है, प्रातः बिस्तर से उठिये तो मुर्गे की बांग का शोर, अलार्म घड़ी का शोर, रेड़ियों एवं टी.वी. का शोर सड़क पर आयें तो चारों ओर शोर, आसमान से उड़ते हुए हवाई जहाज का शोर, बाजार में शोर, आफिस में गपशप का शोर, कल कारखानों में मशीनों का शोर, खेतों में ट्रेक्टरों का शोर, खलिहानों में थ्रेशर का शोर, कोई मरे तो शोर, कोई जन्में तो शोर, शादी विवाह एवं हर मांगलिक अवसरों पर शोर, चुनाव प्रचार-प्रसार में शोर, इस प्रकार चारों तरफ शोर ही शोर ।

रसायनों से पर्यावरण दूषित होता है, यह तो सभी जानते है, पर बहुत कम लोग यह जानते है कि शोर के कारण उससे भी अधिक प्रदूषण होता है । शोर जहरीले रसायनों के मुकाबले किसी भी मायने में कम प्रदूषण नहीं फैलाता है । अन्य प्रदूषकों के समान शोर भी हमारी औद्योगिक प्रगति तथा आधुनिक सभ्यता का ही उपोत्पाद (बाई प्रोडेक्ट) है । विभिन्न उद्योग धन्धो में प्रयुक्त मशीनें और मनुष्य द्वारा अपनी सुख-सुविधा हेतु उपयोग किए जाने वाले अनेकानेक यंत्र शोर का कारण बन गए है । कल-कारखानों में लगी मशीनों की गड़गड़ाहट, ट्रकों के इंजिन तथा टायरों की घर्राहट, मोटरगाड़ियों के हार्न की सरगम, मोटर-साईकिलों की कर्ण भेदी भर्राहट, रेल की घड़घड़ाहट, जेट विमानों की घुर्राहट, यही तो है - हमारे आसपास के वातावरण में गूंजने वाली विभिन्न कोलाहलपूर्ण ध्वनियाँ जो कि हमारी औद्योगिक सभ्यता की देन है तथा हमारे जीवन को अशान्त करने में योगदान दे रही है । इसका अर्थ यह नहीं है कि पहले मनुष्य पूर्ण निःस्तब्ध पर्यावरण में ही रहता था । आदिम सभ्यता के प्रारंभिक काल के वातावरण में भी किन्हीं प्राकृतिक कारणों से शोर उपस्थित रहता ही था, जैसे कि बादलों की गड़गड़ाहट, तड़ित की कड़क और तूफानी हवाओं का शोर आदि, परन्तु निश्चित ही वह शोर इतना घातक नही था जितना वर्तमान में औद्योगिक कारणों से निरन्तर तीव्रता के साथ होने वाला शोर है ।तीव्र औद्योगिकीकरण के कारण इस शोर का प्रभाव क्षेत्र बढ़ता ही जा रहा है । पूर्णतः शान्तिमय वातावरण अब नगरों से दूर भी मिलना मुश्किल है । एक अध्ययन के अनुसार अमेरिका में औद्योगिक प्रगति के साथ-साथ गत पांच वर्षो में शोर का स्तर एक हजार गुना बढ़ गया है । कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. नुडसन का मानना है कि धुएं के समान शोर भी एक धीमी गति वाला मृत्यूदूत है ।

शोर एक अबांछित ध्वनि होती है जो कि पर्यावरिक संदूषण का एक रुप है और जो स्त्रोत के हट जाने पर स्वतः ही समाप्त हो जाता है । भौतिक विज्ञान की दृष्टि से शोर एक ऐसी ध्वनि है जिसमें कोई क्रम नही होता है । उसकी अवधि लम्बी अथवा छोटी तथा आवृत्ति परिवर्तनीय होती है । मनोविज्ञान की दृष्टि से शोर, कोई भी ऐसी ध्वनी जो श्रोता को अप्रिय लगे चाहे वह कितना ही बढ़िया संगीत अथवा गायन क्यों न हो, शोर माना जाता है । अतः अनावश्यक, असुविधाजनक तथा अनुपयोगी आवाज ही शोर है । लेटिन भाषा में शोर का अर्थ होता है - अनावश्यक ध्वनि । यथार्थ में शोर वायुमण्डल के साम्यावस्था वाले दाब में उत्पन्न विक्षोभ ही है । यह किसी आकाश और काल विशेष में संयोगिक रुप से परिवर्तित होता रहता है तथा ध्वनि की गति के साथ-साथ सभी दिशाओं में फैलता जाता है ।

ध्वनि की श्रव्यता और गुणता मुख्यतया उसकी आवृत्ति पर निर्भर करती है । एक व्यक्ति के लिये

जो संगीत है वही दूसरे के लिये शोर हो सकता है । इतना ही नहीं, वही संगीत एक व्यक्ति को दिन के समय कर्णप्रिय लग सकता है या आनन्दित कर सकता है किन्तु महत्वपूर्ण कार्य करते समय या सोते समय अरुचिकर लग सकता है । अतएव कोई आवाज शोर है या नहीं यह उसके कारण, तीव्रता, आवृत्ति, निरन्तरता अथवा व्यवधान आदि पर निर्भर करती है ।

शोर प्रदूषण के स्त्रोत :

सामान्यतया शोर या ध्वनि प्रदूषण के स्त्रोत को दो भागों में विभक्त किया जाता है; (1) प्राकृतिक और (2) कृत्रिम

शोर के प्राकृतिक स्त्रोत के अन्तर्गत बादलों की गड़गड़ाहट, तड़ित की कड़क, तूफानी हवाएं, ऊंचे पहाड़ों से गिरते पानी की आवाज, भूकम्प और ज्वालामुखियों के फूटने से उत्पन्न भीषण कोलाहल तथा वन्य जीवों की आवाजें सम्मिलित की जा सकती है ।

कृत्रिम स्त्रोत :- औद्योगिकरण तथा नगरीकरण के साथ-साथ सुख-सुविधा के अनेक साधन, हमारे पर्यावरण में शोर-वृद्धि के प्रमुख कारण हैं । आधुनिक सभ्यता में कोलाहल के निम्नलिखित प्रमुख कारण होते है ।

1) उद्योग धंधे तथा मशीनें - विगत कुछ वर्षों में तेजी से हुए औद्योगिकरण के कारण कल कारखानों में लगी बड़ी-बड़ी मशीनों तथा यंत्रों से अवांछित शोर होता है । उद्योगों के अतिरिक्त भवन एवं सड़क निर्माण तथा अन्य कार्यों में प्रयुक्त मशीनों की आवाजें शोर वृद्धि में सहायक होती हैं ।

2) स्थल और वायु परिवहन के साधन - स्थल यातायात के विभिन्न साधन जैसे स्कूटर, मोटर-सायकिल, मोटरकार, बस, ट्रक एवं रेल इत्यादि शहरी क्षेत्रों में होनेवाले शोर के मुख्य कारण कहे जा सकते है । उद्योगों की तुलना में परिवहन के इन साधनों द्वारा शोर अधिक व्यापक तथा स्थाई होता है जिससे नगरों और महानगरों में रहनेवाले लाखों लोग प्रभावित होते हैं । परिवहन के विभिन्न साधनों में सबसे अधिक शोर ट्रकों या भारी वाहनों से होता है । इसी प्रकार हवाई अड्डों के समीप भी काफी संख्या में लोग रहते हैं जो कि दिन-रात वायुयानों की तीव्र ध्वनि से ग्रसित होते रहते हैं । इनमें भी सुपरसोनिक विमान प्रतिघाती तरंगे उत्पन्न करते है जो कि बहुत खतरनाक होती हैं ।

3) मनोरंजन के साधन एवं सामाजिक क्रिया कलापः- उच्च आवृति की ध्वनियां संगीत के पूर्ण आनन्द के लिए तो आवश्यक होती हैं, परन्तु वे सामान्यतः शोर पूर्ण होती हैं । राक एन रोल तथा डिस्को बेक का संगीत इसके प्रमुख उदाहरण हैं । कुछ लोगों को तेज आवाज में रेड़िओ एवं टी.वी. सुनने की आदत होती है । अतः ये ध्वनि किसी एक मनुष्य के लिए आनंददायक हो सकती हैं तथा दूसरे के लिए कष्टदायक । हमारे देश में धार्मिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं राजनैतिक कार्यक्रमों में ध्वनि विस्तारक यंत्रों का प्रयोग बहुतायत से होता है तथा आतिशबाजी भी की जाती है जिनसे बहुत ही तीव्र तथा कष्टदायक शोर होता है ।

शोर मापने की इकाई तथा मानक :

ध्वनि को मापने की सरलतम इकाई डेसीबल होती है । इसे डी.बी. द्वारा व्यक्त किया जाता है । डेसीबल का नामकरण सर अल्क्रेड बेल के कारण हुआ है । डेसीबल ध्वनि की तीव्रता अथवा कानों तक पहुँची कोलाहल पूर्ण आवाज को मापता है । डेसीबल लघुगणकीय अनुपात होता है तथा इसमें ध्वनि की क्षमता को स्केल में 0 से 200 डी.बी. में व्यक्त किया जाता है । (चित्र -1)

हमारे कान भी लॉग के पैमाने से ही सुनते है । यही कारण है कि हम ऊँची से ऊँची और धीमी ध्वनि को सरलता से सुन लेते है । डेसीबल स्केल में शून्य प्रबलता का वह स्तर है जहाँ से ध्वनि सुनाई देना आरंभ होती है । दैनिक जीवन में हम अनेक ध्वनियाँ सुनते है । तालिका - 1 में विभिन्न स्त्रोतों से उत्पन्न ध्वनि की प्रबलता डेसीबल में प्रदर्शित की गई है ।

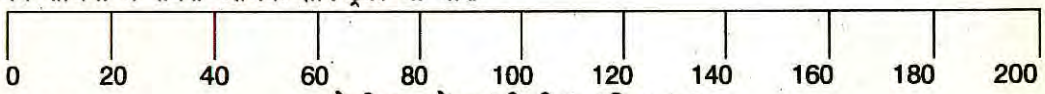

डेसीबल स्केल (डी.बी.) (चित्र - 1)

तालिका - 1

स्त्रोत	ध्वनि की प्रबलता (डी. बी.)
कोई भी	10
फुसफुसाहट	15-25
घड़ी की टिकटिक	30
धीमा रेडियो	30-40
पक्षी	40-50
वार्तालाप	50-60
हल्का यातायात	70
व्यस्त बस्तियाँ	80
मोटर कार	70-80
मोटर साईकल	90
जेट इंजिन	105
तड़ित की कड़क	120
पटाखे	120
जेट यान उड़ते समय	140
अंतरिक्ष यान उड़ान	140

वैज्ञानिकों ने अनुसंधानों द्वारा प्रमाणित किया है कि यदि हम 75 डी.बी. से ऊँची आवाज आठ घंटे से अधिक देर तक प्रतिदिन सुने तो हमारे कान बहरे होने लग जाते है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार रात को सोने के समय का वातावरण 35 डी.बी. से ऊँचा नही होना चाहिये। घरों में आराम से काम करने, बैठने अथवा विश्राम करने के लिये दिन के शोर का माप 45 डी.बी. तक होना चाहिये। काम करने वाले संस्थानों के अन्दर दिन के शोर का माप 55 डी.बी. तक और औद्योगिक क्षेत्रों में 75 डी.बी. से अधिक शोर का माप नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार विभिन्न भवनों के भीतर अधिकतम स्वीकार्य ध्वनि स्तर तालिका - 2 में दी गई सीमा से कम होना चाहिए।

तालिका - 2

स्थल	सीमा (डी.बी.)
फिल्म, प्रसारण तथा टी.वी. स्टूडियो	30
संगीत हाल तथा थियेटर	35
अस्पताल एवं होटल आदि	40
कार्यालय एवं पुस्तकालय आदि	45
दुकान एवं बैंक आदि	50
जलपान गृह एवं परिशुद्ध कार्यशालाएं	55

शोर के घातक प्रभाव :

शोर प्रदूषण के घातक प्रभावों का विवरण इस प्रकार है।

1) कुछ मनोवैज्ञानिकों का विश्वास है कि उच्च ध्वनि के कारण अच्छे खासे व्यक्ति को भी अनिन्द्रा तथा बेचैनी हो जाती है तथा कभी-कभी इसके प्रभाव से लोग हिंसा पर उतारु हो जाते है।

2) वैज्ञानिक अनुसंधान के परिणामों के अनुसार भले ही शोर का स्तर कम ही क्यों न हो मगर लगातार शोर कानों में पड़ने से श्रवण समस्यायें उत्पन्न हो सकती है।

3) संयुक्त राष्ट्र संघ की एक रिपोर्ट से यह प्रकट होता है कि ध्वनि शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक दोनों ही दृष्टियों से व्यक्ति को प्रभावित करती है तथा रक्तचाप एवं हृदय गति को बढ़ाती है। प्रायः इसके परिणाम से तनाव, झपकीपन एवं डर आदि पैदा होता है। बम्बई के डा. बाई. टी. ओकेका के अनुसार शोर अत्यधिक शारीरिक, मानसिक और अव्याहारिक गड़बड़ी पैदा करता है तथा 88 डेसीबल से अधिक का शोर व्यक्ति को बहरा बना सकता है।

4) शोर के कारण व्यक्ति का मस्तिष्क अस्थिर हो जाता है तथा वह उच्च रक्तचाप का रोगी बन सकता है। शोर प्रदूषण के कारण हमारी धमनियाँ सिकुड़ जाती है, हृदय धीमी गति से काम करने लगता है तथा कोलेस्ट्राल बढ़ जाता है जिससे रक्त शिराओं में हमेशा के लिये खिंचाव हो जाता है

और दिल का दौरा पड़ने की आशंका पैदा हो जाती है।

5) शोर के घातक प्रभाव व जीवों तथा निर्जीव पदार्थों पर भी देखे गये है। ऐसे उदाहरण हमारे सामने है। हवाई जहाज तथा यातायात से उत्पन्न शोर के कारण किसानों की मुर्गियों ने अण्ड़े देना बन्द कर दिया। गाय, भैसों के दूध में कमी आ गई तथा बडे बड़े नगरों की बहुमंजिली इमारतों की छतों में दरारें पड़ गई तथा गिरने की स्थिति हो गयी है।

6) गर्भवती स्त्री का अधिक शोर में रहना शिशु में जन्मजात बहरेपन का कारण बन सकता है, क्योंकि कान, गर्भ में पूर्ण रुप से विकसित होने वाला पहला अंग होता है।

7) शोर प्रदूषण से व्यक्ति की स्मरण तथा एकाग्रता कम हो जाती है जिससे कार्य क्षमता भी घट जाती हैं। स्कूली बच्चें इससे ज्यादा प्रभावित होते हैं।

8) शोर प्रदूषण संचार व्यवस्था में विद्युत चुम्बकीय व ध्वनि तरंगो को विचलित करके इनके कार्य में रुकावट पैदा करता है।

शोर से कैसे बचें :

वस्तुतः शोर हमारे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा भावनात्मक जीवन को कमजोर बनाता है। यह देश के विकास में बाधक सिद्ध होता है। इससे निम्न उपायों द्वारा बचा जा सकता है।

1) वैज्ञानिकों के अनुसार ताड़, इमली, नारियल और आम इत्यादि के लम्बे और घने वृक्ष ध्वनि को शोषित करते हैं। अतः इनकों सड़कों के किनारे तथा रेल की पटरियों के किनारे लगाया जाना चाहिये।

2) यातायात के साधनों में साईलेन्सर का उपयोग अनिवार्य कर देना चाहिए।

3) विभिन्न उपकरणों में उच्च स्तरीय तकनीकों का प्रयोग करना चाहिए।

4) अनावश्यक आवाज पर प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिए।

5) बच्चों में धीरे बोलने, टी.वी., रेडियों आदि धीरे चलाने तथा वाहनों के होर्न अनावश्यक न बजाने की आदत डालनी चाहिए।

6) हवाई अड्डों के चारों ओर 10 मील की दूरी तक किसी को आवास सुविधा नहीं देनी चाहिये।

7) अधिक शोर वाले स्थानों पर काम करने वाले व्यक्तियों को इयर प्लग व इयर मास्क का प्रयोग करना चाहिए।

अतः यह निश्चित है कि शोर प्रदूषण के उपचार के लिए यदि कारगर कदम नहीं उठाये गये तो यह समस्या विकराल रुप धारण कर लेगी।

♣◆♣◆

लेखकों से निवेदन

"वैज्ञानिक" हेतु लेख भेजते समय कृपया निम्न बातें ध्यान में रखे :

- लेख का विषय नया हो जो पाठकों में अधिक ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा बढ़ाए,
- लेख मौलिक और पठनीय हो, भाषा सरल और बौधगम्य,
- कृपया अनुवादित लेख न भेजें,
- लेख टंकित किया हुआ अथवा स्पष्ट हस्तलिपि में दोनों और पर्याप्त हाशिएं छोड़ कर काग़ज के एक ओर ही लिखें,
- विषय वस्तु समझाने के लिए यदि चित्र आवश्यक हों तो उन्हें सफेद काग़ज पर काली रोशनाई से खींच कर लेख के अन्त में संलग्न कर दें, पाण्डुलिपि में मूलपाठ के साथ उसी पृष्ठ पर चित्र बनाएं,
- अस्वीकृत रचनाएं डाक - टिकट लगा लिफाफा संलग्न होने पर ही वापस की जाएंगी।

- संपादक

इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाएं

डॉ. अविनाश सप्रे
रासायनिकी प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
ट्रॉम्बे, बम्बई- 400 085.

रासायनिक अभिक्रियाएं अणुओं के इलेक्ट्रॉनीय विन्यास में होने वाले बदलों से होती है। इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाओं में एक या अनेक इलेक्ट्रॉन दाता (D) अणु से स्वीकर्ता (A) अणु पर अंतरिक होते हैं।

$$D + A \rightarrow D^{+} + A^{-} \quad \text{----- (1)}$$

इलेक्ट्रॉन अंतरण सबसे सरल रासायनिक अभिक्रिया है जिसमें न बंध बनते है न टूटते हैं। ऐसी अभिक्रियाएं रसायन विज्ञान की हर शाखा में पायी जाती हैं और मूलभूत तथा प्रयुक्त विज्ञान, दोनो ही दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है (चित्र -1) ।

इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाएं अणुओं के इलेक्ट्रॉनीय निम्न स्तर (ग्राऊंड स्टेट) तथा उत्तेजित अवस्था दोनों में हो सकती है। इलेक्ट्रॉनीय उत्तेजित अवस्था में अणु बेहतर दाता तथा स्वीकर्ता पाये गए हैं (चित्र 2)। प्रकाश प्रेरित इलेक्ट्रॉन अंतरण में उत्तेजित अवस्था में होने वाली अभिक्रियाएं महत्वपूर्ण हैं।

प्रो. मारकस ने इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाओं की संक्रमण (ट्रांजिशन) अवस्था सिद्धान्त द्वारा विवेचना की। उन्होंने निम्नलिखित पहलुओं को ध्यान में रखते हुए अपनी समीकरणों को दिया जिस में समंजसनीय पद नही है;

1) अभिक्रिया का चालक बल (ड्राइविंग फोर्स) : मुक्त ऊर्जा (ΔG^0)
2) विलायक के गुणधर्म,
3) आण्विक आकार और बंध लंबाइयाँ,
4) इलेक्ट्रॉनीय तथा न्यूक्लीय युग्मन, और

परिचय

प्रो. रूडोल्फ आर्थर मारकस का जन्म 21 जुलाई 1923 को माँट्रीयल कनाडा में हुआ। मैकगिल विश्वविद्यालय से बी.एस.(1943) और पीएच.डी. (1946) की उपाधियाँ प्राप्त करने के बाद इन्होंने 3 साल नैशनल रिसर्च कौन्सिल कनाडा में अनुसंधान किया। सन 1949 में वे अमेरिका आए और 1958 में अमरीकी नागरिक बने। प्रो. मारकस नॉर्थ केरोलिना विश्वविद्यालय, पोलीटेक्निक इंस्टिट्यूट ब्रूकलिन तथा इलिनॉय विश्वविद्यालय अरबाना में काम करने के बाद 1978 से केलटेक पासोडना में रसायन विज्ञान के प्राध्यापक है। इन्होंने 1956-1965 के बीच इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाओं पर जो अनुसंधान किया उसे 1992 वर्ष का नोबेल पुरस्कार दिया गया है। इसके अलावा प्रो. मारकस ने संक्रमण अवस्था सिद्धांत, टकराव गतिकी पर अर्धपारंपारिक (सेमिक्लासिकल) सिद्धांतीय अनुसंधान, एक आण्विक अभिक्रियाएं (युनिमोलीक्यूलर) आदि क्षेत्रों में भरपूर योगदान दिया है। आज 70 साल की उम्र में भी वे अनुसंधान कार्य में पूर्णतः सक्रिय हैं।

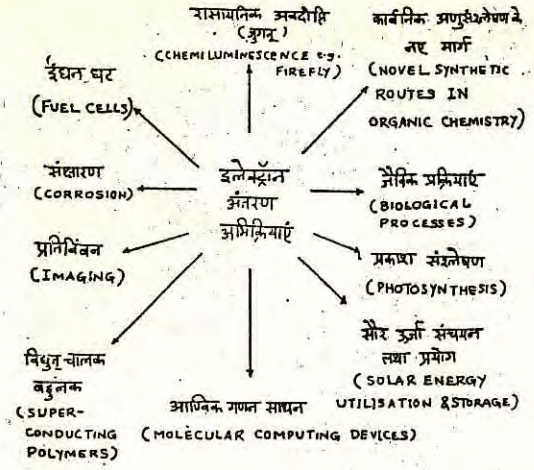

चित्र -1 इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाओं का महत्त्व

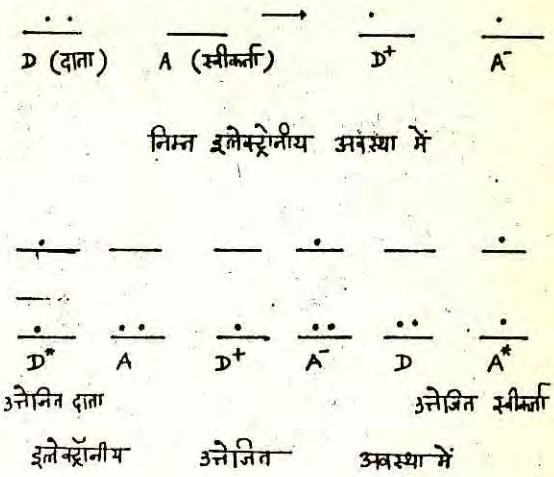

चित्र -2 इलेक्ट्रॉन अंतरण

5) स्थिरोष्म (एडियाबेटिक) तथा अस्थिरोष्म (नॉन एडियाबेटिक) स्थितियाँ.

दाता और स्वीकर्ता अणु विसरण द्वारा एकत्र होते हैं और एक पूर्व संश्लिष्ट (प्री-कांप्लेक्स) बनाते है, जिस से इलेक्ट्रॉन अंतरण द्वारा पश्चात संश्लिष्ट (पोस्ट-कॉप्लेक्स) बनता है जो अंत में आयन देता है, यथा -

$$D + A \underset{K_d}{\overset{K_a}{\rightleftharpoons}} [D \cdots A] \underset{K_{-ET}}{\overset{K_{ET}}{\rightleftharpoons}}$$

पूर्व संश्लिष्ट

$$[D^+ \cdots A^-] \xrightarrow{K_s} D^+ + A^- \quad \cdots 2$$

पश्चात संश्लिष्ट

मारकस के अनुसार इलेक्ट्रॉन अंतरण गति स्थिरांक (K_{ET}) निम्नलिखित समीकरण द्वारा दिया जाता है।

$$K_{ET} = K A \exp [-\Delta G^*/K_B T] \quad \cdots 3$$

जिसमें K प्रसारण (ट्रान्समिशन) गुणांक, A- टकराव आवृति, ΔG^* सक्रियण की मुक्त ऊर्जा (फ्री एनर्जी ऑफ एक्टिवेशन), T- तापमान, k_B- बोल्टजमैन स्थिरांक है। स्थिरोष्म स्थितियों में $K \cong 1$ तथा अस्थिरोष्म स्थितियों में $K << 1$ होता है। मारकस के अनुसार, स्थिरोष्म स्थितियों में ΔG^* में दो तरह के योगदान रहते हैं, 1) पुनर्संगठन ऊर्जा [री-ओरिएंटेशन एनर्जी (λ)] और 2) अभिक्रिया की मुक्त ऊर्जा (ΔG^0)

$$\Delta G^* = \Delta G^0 + \lambda \ldots \quad 4$$

पुनर्संगठन ऊर्जा में भी दो तरह की ऊर्जाएं सम्मिलित होती हैं, यथा

$$\lambda = \lambda v + \lambda s \ldots \quad 5$$

λv- अभिक्रियकों की कंपनीय पुनर्संगठन ऊर्जा

λs- विलायक अणुओं की पुनर्संगठन ऊर्जा

जिन अभिक्रियाओं में बंध बदल महत्वपूर्ण होते हैं, उन में λv का योगदान अधिक होता है (यानी $\lambda v >>> \lambda s$) ।

ऐसी अभिक्रियाओं को अंतःगोलीय (इनर स्फिअर) अभिक्रियांए माना जाता है, उन में λs का योगदान अधिक होता है (यानी $\lambda s >>> \lambda v$)। ऐसी अभिक्रियाओं को बाह्य गोलीय (आऊटर स्फिअर) अभिक्रियाएं माना जाता है।

λv और λs के मान प्रयोगों से मालूम किए जा सकते हैं। इस प्रकार ज्ञात किए हुए λv और λs का मान

तालिका - 1

अंतःगोलीय पुनर्संगठन ऊर्जाएं λ_v (इलेक्ट्रॉन वोल्ट, eV, में)

क्रमसंख्या	अभिक्रिया	λv
1.	$Fe(H_2O)_6^{2+} + Fe(H_2O)_6^{3+} \rightleftharpoons Fe(H_2O)_6^{3+} + Fe(H_2O)_6^{2+}$	0.36
2.	$Ru(NH_3)_6^{2+} + Ru(NH_3)_6^{3+} \rightleftharpoons Ru(NH_3)_6^{3+} + Ru(NH_3)_6^{2+}$	0.03
3.	$TMPD \rightleftharpoons TMPD^+ + e^-$	0.2
4.	1, 1 डाइफिनिलीन $\longrightarrow$ 1, 1 (डाइफिनिलीन) $^+ + e^-$	0.03

1,2 — स्वयं विनिमायक अभिक्रियाएं, TMPD – N, N, N', N'- टेट्रामिथाईल - p - फिनीलीन डाय अमीन

तालिका - 2

बाह्यगोलीय पुनर्संगठन ऊर्जाएं λ_s (इलेक्ट्रॉन वोल्ट में)

दाता त्रिज्या A^0	स्वीकर्ता त्रिज्या A^0	विलायक				
		जल	एसीटोनैट्राईल	एथानॉल	ग्लाईकॉल	बैंजीन
2	2	1.98	1.90	1.79	1.57	0.02
4	2	1.65	1.58	1.50	1.31	0.01
6	2	1.65	1.58	1.50	1.31	0.01
4	4	0.99	0.95	0.90	0.78	0.01
6	4	0.86	0.82	0.78	0.68	0.01
6	6	0.66	0.63	0.60	0.52	0.01

यह माना गया है कि अभिक्रियक गोलाकार है और इलेक्ट्रॉन अंतरण के समय परस्पर संपर्क में है।

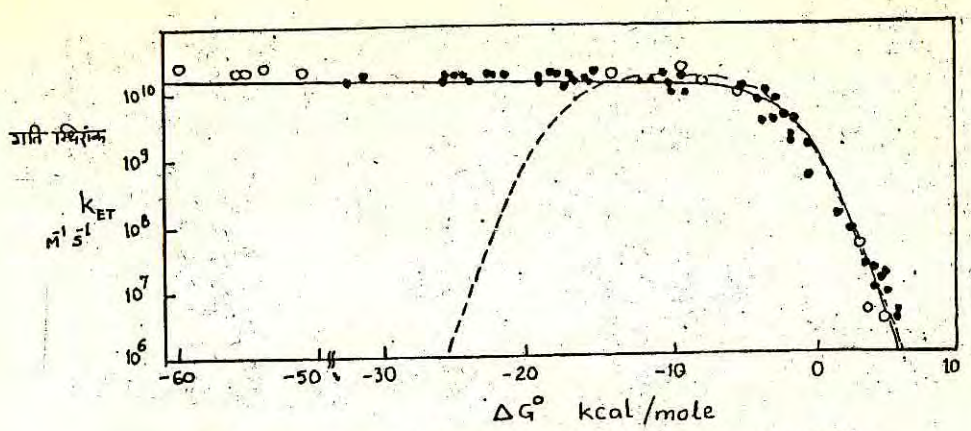

चित्र -3 प्रकाश अवदीप्ती दमन गति स्थिरांकों की मुक्त ऊर्जा पर निर्भरता

- उत्तेजित स्वीकर्ता को इलेक्ट्रॉन अंतरण
- ° उत्तेजित दाता से इलेक्ट्रॉन अंतरण

--- मारकर समीकरण के अनुसार

तालिका -1 तथा तालिका- 2 में दिए गए हैं।

इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रिया की मुक्त ऊर्जा रिडॉक्स विभव (पोटेंशिअल) से मापी जा सकती है।

विभव ऊर्जा आकृतियों की सहायता सें प्राप्त ΔG^{*}, ΔG^{0} तथा के मध्य संबंध इस प्रकार है :

$$\Delta G^{*} = (\lambda + \Delta G^{0})^{2} / 4\lambda \quad \ldots . \quad 6$$

समीकरण 3 और 6 के संयोग से निम्न मारकस समीकरण मिलता है:

$$K_{ET} = KA \exp\left[-(\lambda + \Delta G^{0})^{2} / 4 \lambda K_{B} T\right] \cdots 7$$

समीकरण 7 से तीन स्थितियाँ मिलती है:

1) $\lambda + \Delta G^{0}$ - धनात्मक सामान्य क्षेत्र,
2) $\lambda = \Delta G^{0}$ इस स्थिति मे गतिस्थिरांक (K_{ET}) महत्तम होता है, और
3) $\lambda + \Delta G^{0}$ - ऋणात्मक, इस स्थिति में K_{ET} फिर घटता है और इसे मारकस विलोमित क्षेत्र (इन्वर्टेड रीजन) कहते हैं।

इस समीकरण द्वारा मारकस ने बताया कि ΔG^{0} के घटने से गतिस्थिरांक पहले बढ़ते हैं और फिर घटते है।

मारकस के सिद्धांतो को प्रायोगिक रूप से जाँचने का पहला व्यापक अध्ययन 1970 में जर्मनी में डीटर रेहम और अल्बर्ट वेलर ने किया। इन्होंने 60 कार्बनिक अणु दाता स्वीकर्ता जोड़ियों में प्रकाश अवदीप्ति (फ्लूओरेसेन्स) दमन का अध्ययन किया (चित्र 3)। इस में विलोमित क्षेत्र उन्होंने नही देखा। तब से 12-14 साल विलोमित क्षेत्र पाने के प्रयास विफल रहे। 1985 मे आरगोन नेशनल प्रयोगशाला (अमेरिका) के वैज्ञानिक मिलर और क्लोस ने हिमित (फ्रोजन) कार्बनिक द्रवों : मिथाईल टेट्राहाईड्रोफ्यूरेन

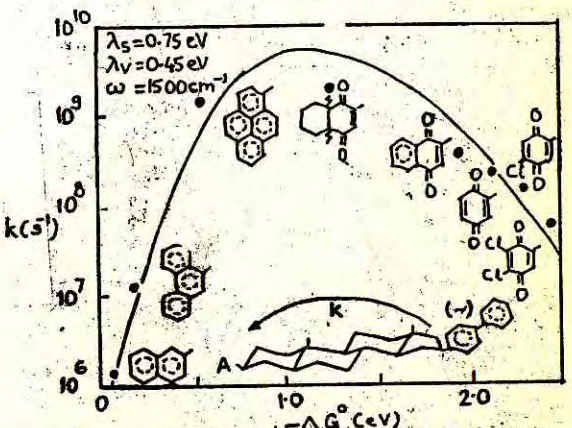

चित्र - 4 आण्विय इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाओं में विलोमित क्षेत्र बाइफिनाइल ऋण आयन से आठ अलग अलग स्वीकर्ता अणुको इलेक्ट्रॉन अंतरण

शेष पृष्ठ 37 पर

नोबेल पुरस्कार : किसे और क्यों ?

जीवन क्रियाओं का नियंत्रण : विपर्यायी प्रोटीन फॉसफोरिलेशन द्वारा

डॉ. श्रीकुमार आपटे
आण्विक जैविकी एवं कृषि प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
बम्बई - 400 085

वर्ष 1992 में शरीर-क्रिया विज्ञान एवं औषध-शास्त्र विषय के नोबेल पुरस्कार का सम्मान वॉशिंगटन विश्वविद्यालय, सिएटल में कार्यरत दो वैज्ञानिकों को प्राप्त हुआ । 87 वर्ष के डॉ. एडविन क्रेब्स (औषध-शास्त्र विभाग) और 72 वर्ष के डॉ. एडमंड फिशर (जीव-रसायन विभाग) को यह सम्मान लगभग 3 दशकों पूर्व उनके द्वारा "विपर्यायी प्रोटीन फॉसफोरिलेशन" पर संयुक्त रुप से किए गए शोध-कार्य के लिए प्रदान किया गया।

यह सर्व विदित है कि जीवन की लगभग सभी गतिविधियाँ जीवन कोशाओं में उपस्थित प्रोटीनों, विशेषत: एन्जाइमों द्वारा संपन्न होती हैं। एन्जाइम विभिन्न जीव-रसायनिक क्रियाओं में उर्वरक का कार्य करते हैं और क्रियाओं की गति बढाते हैं। किंतु एन्जाइमों की स्वत: की उर्वरक क्षमता का नियंत्रण भी संभव है। फॉसफोरिलेशन ऐसी ही एक प्रतिक्रिया है जिसके द्वारा एन्जाइमों की क्रियाशीलता बढाई अथवा निष्कृत की जा सकती है। एन्जाइम, या प्रोटीन 20 अमीनो एसिड से मिलकर बनते है। इन अमीनो एसिड में से कुछ चुने हुए अमीनो एसिड पर एक या अधिक अति ऊर्जा वाले फॉस्फेट वर्गों के स्थानांतरण के प्रक्रम का ही नाम फॉसफोरिलेशन है। कोशाओं जैसे अति ऊर्जा वाले फॉस्फेट वर्गों का प्रमुख स्रोत है ए.टी.पी.(एडिनोसिन ट्राइफॉस्फेट) जैसे अणु जिनमें श्वसन क्रिया द्वारा उपलब्ध ऊर्जा संचित रहती है। आवश्यकता पड़ने पर एटीपी का उपयोग ऊर्जा के रुप में होता है।

ग्नायकोजन फॉसफोरिलेज वह पहला एन्जाइम था जिसका विपर्यायी (रिवर्सिबल) फॉसफोरिलेशन डॉ. क्रेब्स एवं फिशर के प्रयोगों द्वारा (वर्ष 1955 से 1959) प्रमाणित हुआ। ग्लायकोजन फासफोरिलेज शरीर की अपचय में काम आनेवाला पहला एन्जाइम है। इन वैज्ञानिकों ने दर्शाया कि मांसपेशियों में यह एन्जाइम दो रुपों में पाया जाता है। फॉसफोरिलेज-बी अक्रिय है जब कि फॉसफोरिलेज-ए एन्जाइम का क्रियाशील रूप है। एक रूप का दूसरे रूप में परिवर्तन ही इस एन्जाइम की क्रियाशीलता निर्धारित करता है। रेडिओधर्मी ^{32}P द्वारा अंकित $\gamma-^{32}P-ATP$ का उपयोग करते हुए डॉ. क्रेब्स और फिशर ने यह प्रमाणित किया कि एटीपी और द्विसंयोजक धातु (जैसे मैग्नीशियम) की उपस्थिति में अक्रिय फॉसफोरिलेज-बी एन्जाइम के क्रियाशील रूप फॉसफोरिलेज-ए में रूपांतरित हो जाता है। इस आपरिवर्तन का आधार है एन्जाइम में उपस्थित अमीनो-एसिड सीरिन से एक अति ऊर्जा वाले फॉस्फेट वर्ग का द्विसंयोजक बंध (कोवेलेंट बॉंड) द्वारा जुड जाना। रेडियोधर्मिता के प्रयोग से यह भी दर्शाया गया कि फॉसफोरिलेशन की यह क्रिया उत्क्रमणीय है । एक अन्य एन्जाइम फॉसफेटेज सीरिन फॉस्फेट से फॉस्फेट वर्ग को विभक्त कर देता है जिसके परिणाम स्वरूप फासफोरिलेज-ए पुन: फॉसफोरिलेज-बी में परिवर्तित हो जाता है। इन प्रयोगों की सफलता के प्रमुख तत्व थे नियंत्रण में संलग्न काइनेज और फॉस्फेटेज की खोज तथा शुद्धिकरण और रेडियोधर्मिता का उपयोग काइनेज और $\gamma-^{32}P$-ATP की उपस्थिति में फॉसफेरिलेज-ए

(सक्रिय) व रेडियोधर्मिता से अनुबद्ध होना तथा सक्रिय एन्जाइम का फॉसफेट्टेज की उपस्थिति में अरेडियोधर्मी अक्रिय एन्जाइम-बी में रूपांतरण जैसे प्रमाणों ने फॉसफोरिलेशन प्रक्रिया की विपर्यायिता को सिद्ध कर दिया।

ग्लायकोजन फॉसफोरिलेज का विपर्यायी फॉसफोरिलेशन

वर्ष 1950 से 1970 के 20 वर्ष जीव-रसायन शास्त्र में कई तरह के एन्जाइमों की संरचना और उनकी क्रियाशीलता के नियंत्रण की खोजों के सुनहरे वर्ष थे। विपर्यायी फॉसफोरिलेशन की खोज ऐसी अनेक खोजों में से एक बनकर रह गई। वर्ष 1955 से 1961 के बीच केवल दो अन्य एन्जाइमों का विपर्यायी फॉसफोरिलेशन द्वारा नियंत्रण प्रमाणित हुआ। इस प्रकार यद्यपि विपर्यायी फॉसफोरिलेशन का ज्ञान रोचक और नवीनतापूर्ण अवश्य था किंतु ऐसा प्रतीत होता था कि यह कुछ एन्जाइमों के नियंत्रण तक ही सीमित है। वर्ष 1968 में डॉ.क्रेब्स और फिशर की एक और खोज प्रकाशित हुई जिसने साबित किया कि फॉसफोरिलेज 'बी' को 'ए' में रूपांतरित करने वाला फॉसफोरिलेज काइनेज स्वयं भी फॉसफोरिलेशन का शिकार है और इसके द्वारा ही नियंत्रित है। इसी वर्ष इन्ही वैज्ञानिकों ने सायक्लिक एएमपी. (Cylic-AMP) पर निर्भर प्रोटीन काइनेज की भी खोज की तथा इस एन्जाइम की फॉसॅफोरिलेज काइनेज के प्रति विशिष्टता को भी प्रमाणित किया। कई प्रकार के फॉसफोरिलेज काइनेज फॉसफेटेज, उनकी विशिष्टताएँ और उनके द्वारा कई जीव-रसायनिक क्रियाओं के नियंत्रण की खोजों ने

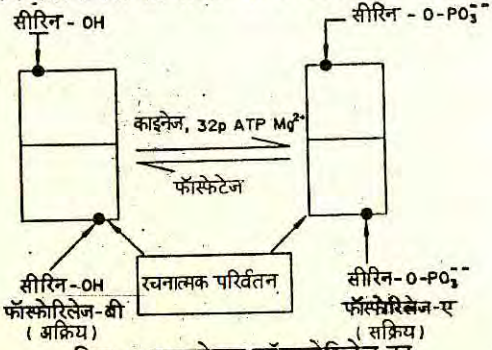

चित्र : ग्लायकोजन फॉसफोरिलेज का विपर्यायी फॉसफोरिलेशन

प्रोटीन फॉसफोरिलेशन का व्यापक महत्व दर्शाया। वर्ष 1970 से 1990 के दो दशकों में कई प्रोटीनों के विपर्यायी फॉसफेरिलेशन के प्रमाण मिले हैं। जीवन की लगभग सभी क्रियाएं विशेषत: कोशा की वृद्धि, विभाजन, वाईरस द्वारा कोशाओं का रूपांतरण, डीएनए का अनुलेखन और अनुवादन जैसी सभी गतिविधियाँ विपर्यायी फॉसफोरिलेशन द्वारा प्रमाणित किये जाने के प्रमाण मिल चुके है। लगभग 3 दशकों पूर्व डॉ. क्रेब्स और फिशर द्वारा की गई मूल खोज के जीवन क्रियाओं के नियंत्रण में व्यापक महत्व को दखते हुए ही वर्ष 1992 के नोबेल पुरस्कार का सम्मान इन वैज्ञानिकों को दिया गया।

कोशाओं में होने वाली जीव-रसायनिक क्रियाओं और उनमें कार्यरत एन्जाइमों के नियंत्रण की कई विधियों से आज अवगत हैं। किंतु इन सभी में विपर्यायी फॉसफोरिलेशन ऐसे नियंत्रण की सबसे सशक्त विधि प्रतीत होती है। इस सक्षमता के प्रमुख कारण है: (1) ऊर्जा की आवश्यकता की दृष्टि से कार्यक्षम (2) त्वरित प्रतिक्रिया संभव (3) प्रतिक्रिया का तेजी से विस्तार (Cascading) संभव, और (4) एन्जाइमों के नवनिर्माण की आवश्यकता नही। (5) व्यापक प्रभाव के उपरांत भी विशिष्टता संभव।

जैसा कि पहले कहा गया है फॉसफोरिलेशन में फॉस्फेट वर्ग कुछ चुने हुए अमीनो एसिड से अनुबद्ध हो जाते है। फॉसफोरिलेशन की क्रिया चंद अमीनो एसिड तक ही सीमित है। नाभिकीय और अनाभिकीय जीवों में फॉसफोरिलेशन में भाग लेने वाले अमीनो एसिड भिन्न भिन्न प्रकार के होते है। अनाभिकीय जीवों में केवल 2 अमीनो एसिड हिस्टीडीन और अस्पाराजिन ही विपर्यायी फॉसफोरिलेशन में हिस्सा लेते हैं। नाभिकीय जीवों में प्रोटीन फॉसफोरिलेशन में भाग लेने वाले अमीनो एसिड सीरिन, थ्रियोनीन व टाइरोसीन सीरिन अमीनो एसिड का प्रयोग होता है, 5 से 8 प्रतिशत प्रोटीनों में थ्रियोनिन और केवल एक प्रतिशत उदाहरण ऐसे मिले है जिनमें टाइरोसीन का उपयोग होता है। इसका अर्थ यह नही हैं कि सीरिन की तुलना में टाइरोसीन प्रोटीन फॉसफोरिलेशन में महत्वपूर्ण है। असल में वाईरस द्वारा रूपांतरण, वृद्धि के आवश्यक

कारक, इत्यादि भी टाइरोसीन काइनेज द्वारा नियंत्रित होते है। भिन्न भिन्न प्रोटीन फॉसफोरिलेशन में अलग अलग अमीनों अम्लों का भाग लेना सिर्फ इस बात का प्रतीक है कि इस प्रक्रिया के कार्बनिक विकास में अलग अलग रास्ते चुने गये है। अलग अलग अमीनो एसिड कई विशिष्टताओं को भी जन्म देते है जैसे टाइरोसीन काइनेज केवल ऐसे प्रोटीनों को फॉसफोटीकृत कर सकते है जिनमें विशिष्ट स्थान पर टाइरोसीन पाया जाता है-अन्य प्रोटीनों को नहीं।

फॉसफोरिलेशन द्वारा नियंत्रण सकारात्मक भी हो सकता है और नकारात्मक भी अर्थात किसी एन्जाइम की गतिविधि फॉसफोरिलेशन से उत्तेजित होती है जबकि कोई अन्य एन्जाइम निष्क्रिय हो जाता है। फॉसफेटीकृत होने वाले अमीनो एसिड के प्रोटीन में विशिष्ट स्थान का भी महत्त्व है उदाहरणार्थ किसी प्रोटीन में एक से अधिक टाइरोसीन होने पर भी किसी विशिष्ट स्थान पर उपस्थित टाइरोसीन ही फॅसफेटीकृत होता है, अन्य नही। यहाँ पर उल्लेख करना भी आवश्यक है कि यद्यपि फॉसफोरिलेशन द्वारा जीवन क्रियाओं का सूक्ष्म और सुचारू नियंत्रण संभव है अनियंत्रित फॉसफोरिलेशन हानिकारक भी हो सकता है, जैसे अनियंत्रित टाइरोसीन फॉसफोरिलेशन का संबंध कर्करोग (Cancer) की अनियंत्रित वृद्धि से भी दर्शाया गया है । इसी प्रकार यद्यपि ये फॉसफोरिलेशन के नियंत्रण में काइनेज की प्रमुख भूमिका रहती है किंतु इसका अर्थ यह कदापि नही है कि विपर्यायी क्रिया में भाग लेने वाले फॉसफेटेज का महत्त्व कम कम हो। फॉसफेटेज की अपनी ही स्वतंत्र और नियंत्रक भूमिका है। इनका प्रमुख उत्तरदायित्व कोशाओं की मेम्ब्रेन में उपस्थित ग्राह्य स्थलों का नियंत्रण है। जैसे अनियंत्रित फॉसफोरिलेशन हानिकारक है ठीक इसी प्रकार अनियंत्रित फॉसफेटेज भी हानिकारक है उदाहरणार्थ प्लेगकारक जीवाणु 'यरसीनिया' की रोगकारक क्षमता अनियंत्रित टाइरोसीन फॉसफेटेज पर निर्भर करती है। वास्तव में काइनेज और फॉसफेटेज एक ही क्रिया के दो पहलू हैं - किसी का भी महत्त्व दूसरे से कम नही है। किसी भी जीवन क्रिया का सुचारू रूप से संचालन दोनो ही क्रियाओं के अनुपात पर निर्भर करता है। यह अनुपात परिस्थितीजन्य है। परिस्थिति के अनुरूप यदि अनुपात संतुलित न रहे तो ये जीवनावश्यक विपर्यायी प्रक्रिया रोगकारक भी सिद्ध होती है।

अनाभिकीय जीव जैसे बैक्टीरिया इत्यादि में कई महत्वपूर्ण और विविध प्रकार की जीवनक्रियाओं का संचलन द्विघटक प्रणाली द्वारा होता है। इस प्रणाली के प्रमुख तत्व है दो प्रोटीन जिनमें से एक संकेत संवेदक के रुप में कार्य करता है जबकि दूसरा प्रतिक्रिया नियंत्रक के रूप में । संकेत संवेदक प्रोटीन में एक संरक्षित हिस्टीडीन होता है जो विशिष्ट परिस्थिति में हिस्टीडीन काइनेज द्वारा फॉस्फेटीकृत हो जाता है। दूसरी ओर प्रतिक्रिया नियंत्रक में एस्पार्टेट रहता है जो हिस्टीडीन फॉस्फेट से फॉस्फेटीकृत किया जाता है। एस्पार्टेट के फॉस्फेटीकृत होने पर ही प्रतिक्रिया नियंत्रण संभव होता है। ऐसी द्विघटक प्रणालियां कई क्रियाओं का संचलन करती है उदाहरणार्थ स्पोरूलेशन, लवण सहिष्णुता, नाइट्रोजन स्थिरीकरण, जीवाणुओं की गति और रसायनों के प्रति संवेदनशीलता, जीवाणुओं द्वारा विषों (टॉक्सीन) का उत्पादन इत्यादि । यह ध्यान देने योग्य बात है कि उपरोक्त सभी क्रियाएं विशिष्ट परिस्थितियों में ही संपन्न होती हैं वे सामान्य जीवन का अंग नही है। निम्नलिखित दो क्रियाएं दर्शाती है कि यह किस प्रकार संभव है :

1

एटीपी + हिस्टीडीन (हिस्टीडीन काइनेज) ⟷ संकेत एडीपी + हिस्टीडीन-P (सक्रिय)

2

संकेत संवेदक हिस्टीडीन-P + प्रतिक्रिया नियंत्रक - एस्पार्टेड ⟷ हिस्टीडीन + प्रतिक्रिया नियंत्रक एस्पार्टेड-P सक्रिय

विशिष्ट परिस्थिति का संकेत मिलने पर संकेत संवेदक काइनेज द्वारा सक्रिय होता है और फिर प्रतिक्रिया नियंत्रक को सक्रिय अवस्था में रूपांतरित करता है। इस प्रकार परिस्थिति के अनुरूप प्रतिक्रिया संभव हो सकती है।

अनाभिकीय जीवों की तुलना में नाभिकीय जीवों में विपर्यायी फॉसफोरिलेशन इन जीवों का बहुकोशीय होना एवं कई क्रियाओं का नाभिक में स्थित होना भी शामिल है। हाल के वर्षों में नाभिकीय कोशाओं में उपस्थित विपर्यायी फॉसफोरिलेशन द्वारा जननांकों (जीन्स) के नियंत्रण का सूक्ष्म अध्ययन हुआ है। इस संशोधन से कुछ नई बातें पता चली हैं। जैसे एक ही घटक द्वारा सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार के नियंत्रण संभव है। यह भी पता चला है कि एक ही प्रोटीन में सकारात्मक/नकारात्मक नियंत्रण के लिए अलग-अलग आरक्षित क्षेत्र रहते हैं। हर क्षेत्र के लिए भिन्न-भिन्न काइनेज और फॉसफेटेज नियुक्त है। फॉसफेटेज नाभिकीय कोशाओं में होने का वैज्ञानिकों का अनुमान

है।इतने सारे प्रोटीनों का नियंत्रण चंद अमीनो एसिड के विपर्यायी फॉसफोरिलेशन से होना अपने आप में एक ऐसा तथ्य है जिसका आकलन सहज संभव नही है। क्या एक फॉसफोरिलेज एक से अधिक क्रियाओं में रत प्रोटीनों को सक्रिय बना सकते हैं? यदि हां तो ऐसे फॉसफोरिलेशन से कौन सी क्रिया उत्तेजित होगी यह कैसे निर्धारित होता है? क्या चंद अमीनो एसिड के प्रति या सायक्लिक एएमपी के प्रति विशिष्टता जीवन की हजारों गतिविधियों के सुचारु संचलन के लिये काफी हैं? क्या फॉसफेटेज या काइनेज अपना प्रोटीन पहचानने में गलती नही करते? टेलीफोन में क्रास-कनेक्शन लगने पर होने वाली अस्पष्टता और भ्रम से हम सभी अवगत हैं। क्या ऐसे क्रास-कनेक्शन काइनेज और फॉसफेटेज के बीच भी हो सकते हैं यदि हाँ तो इससे उत्पन्न क्रास वार्तालाप (Cross Talk) केक्या दुष्परिणाम होते है। कोशाओं के लिए चूंकि ये जीवन-मरण का प्रश्न बन सकता है अतः उचित विशिष्टता के उपयोग से शायद ऐसे क्रास वार्तालापों को प्रतिबंधित किया जाता है। इन सब प्रश्नों के पीछे छुपे रहस्यों की खोज वर्तमान में शोध के अत्यंत रोचक एवं महत्वपूर्ण विषय हैं।

◆◆◆◆

(पृष्ठ 33 का शेष)

तथा ब्यूटाईल साईनाइड, में 77 कें. ताप पर प्रथम अंतरआण्विक (इन्टर मोलेक्यूलर) इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रयाओं में विलोमित क्षेत्र पाया। अंतःआण्विक (इंट्रामोलेक्युलर) अभिक्रियाओं में भी इसी प्रकार विलोमित क्षेत्र देखा गया (चित्र 4)।

A – sp – B

30 पीको सेंकेड इलेक्ट्रॉन पुंज द्रव मिथाईल टेट्राहाइड्रोफ्यूरेन या आईसो ऑक्टेन, 216 K ताप पर

$$A-Sp-B^- \underset{K_{ET}}{\overset{K_{ET}}{\rightleftharpoons}} A^- - Sp - B - 8$$

इस प्रयोग में दाता स्वीकर्ता A और B अंतरक (स्पेसर Sp) से जुडे हुए हैं। इलेक्ट्रॉन पुंज विकिरणन से ऋण आयन $A-Sp-B^-$ तथा $A=Sp-B$ बनते हैं और उनमे इलेक्ट्रॉन अंतरण होता है। इस प्रयोग में 5-α एन्ड्रोस्टेन गुट अंतरक के तौर पर इस्तेमाल किया था।

विलोमित क्षेत्र न पाने के कुछ कारण इस प्रकार हैं।

1) इलेक्ट्रॉनीय उत्तेजित अवस्था में कंपनीय उत्तेजना भी होती है इससे ΔG^* का अनुमान गलत होता है।

2) पर्यायी अभिक्रिया मार्ग जैसे H अणु अंतरण मौजूद रहते है।

3) उच्च ΔG^0 क्षेत्र में उत्तेजित संश्लिष्ट (एक्साई प्लेक्स) बनते हैं।

4) विशेष आयन - विलायक परस्पर क्रियाएं मौजूद रहती है।

5) क्वांट्म परिमाण- न्यूक्लीय टनेलिंग होती है।

अंतःआण्विक इलेक्ट्रॉन अंतरण में अंतरक की लंबाई बढ़ने से गति स्थिरांक घटते हैं।

- पिछले कुछ सालों में कई रोचक प्रायोगिक निष्कर्ष मिले हैं।
- मोनोलेयर प्रोटीन समायोजन में इलेक्ट्रॉन अंतरण की गति तीन से अधिक गुना तेज पायी गई है।
- पोरफिरीन और क्विनोन प्रणालियों में क्विनोंन के अलग अलग दिगविन्यासों से K_{ET} चारगुना बदलता है। इन्हीं प्रणालियों में टोलवीन तथा ब्यूटरोनैट्राईल द्रवों में गति स्थिरांक उतने ही पाए गए। जब कि इन द्रवों की ध्रुवीयता (पोलरिटी) में बहुत अंतर है। और कुछ सवाल इस प्रकार पैदा हुए हैः
- इलेक्ट्रॉन की तरह क्या धन आवेश का भी अंतरण होता है?
- (सिगमा) तथा II (पाई) इलेक्ट्रॉन अंतरण में किस तरह का अंतर है और क्यों?
- स्थिरोष्म और अस्थिरोष्म अवस्थाओं का अंतरण पर प्रभाव क्या है?

ऐसे रोचक मुद्दों पर काफी अनुसंधान हो रहा है। इलेक्ट्रॉन अंतरण पर पहला नोबेल पुरस्कार अमेरिका के ही प्रो. हेनरी टाऊबे को 1983 में मिला था और दूसरा इस साल प्रो. मारकस को। इस के बावजूद भी इस क्षेत्र में कई प्रश्न अनुत्तरित हैं और विश्व की कई प्रयोगशालाएं कार्यरत है। अनुसंधान के नये मोड़ तथा आयाम क्या होंगे यह तो भविष्य ही बताएगा।

♣♣♣♣

टिप्पणियां

1. गुत्थी सिरदर्द की

'सिरदर्द' भले ही अब तक चिकित्सकों का सिरदर्द बना रहा, पर अब इसकी गुत्थियां धीरे-धीरे मस्तिष्क कोशिकाओं और रसायनिक क्रियाओं का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों के सम्मुख खुलती जा रही हैं।

करीब पचास साल पहले यह माना जाता था कि 'माइग्रेन' (आधासीसी, अर्थात आधे सिर में तीव्र दर्द) मनोवैज्ञानिक कारणों से ही उपजता है, जिसमें रक्त वाहिनियां या तो सिकुड़ जाती हैं या उनमें सूजन आने से ऐसा होता है । किन्तु ये अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि इसका कारण जीववैज्ञानिक है, और यह तंत्रिका कोशिकाओं व रासायनिक संदेशवाहकों की गड़बड़ी से पैदा होता है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि सिरदर्द की इस नई खोज से 'यह केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र की जीववैज्ञानिक बीमारी है', यह समझने में मदद मिलेगी कि इसके कारक क्या हैं और लक्षण क्या हैं। विशेषज्ञों के अनुसार इस खोज से औषधियों का असर जानने और नई औषधियों की खोज करने में आसानी होगी।

आधासीसी सिरदर्द, सिर के दाएं या बाएं भाग में तीव्रता से उठता है । घंटों या कई दिनों तक बना रहता है। यह हर महिने या हर दिन के अंतराल से भी होता है। भयंकर पीड़ा के अलावा यह व्यक्ति को बेहद चिड़चिड़ा भी कर देता है। उसे शोर या प्रकाश से बड़ी तकलीफ पहुंचती है। इससे नींद और मूड दोनों पर ही विपरीत प्रभाव पड़ता है।

मानसिक तनाव आधे सिर के दर्द के रोगियों पर कुप्रभाव तो डालता ही है, कुछ अन्य भौतिक एवं रासायनिक प्रभाव भी सिरदर्द का कारण बन सकते हैं, मसलन - तेज रोशनी, वायुमंडल के दाब में परिवर्तन, हार्मोन और भोजन आदि। महिलाओं में यह सिरदर्द प्रायः अधिक पाया जाता है।

एक नई दवा पर प्रारम्भिक परीक्षण चल रहे हैं।समझा जाता है कि यह मस्तिष्क की बिगड़ी रासायनिक दशा को सुधार देगी। इसे फिलहाल 'जी आर 43175 क्रमांक से जाना जाता है । यह बेहद प्रभावकारी और अन्य दवाओं के विपरीत, दुष्प्रभावों से मुक्त है।

सिरदर्द विशेषज्ञ डॉ. सीमौर सोलोमॉन का कहना है कि सिरदर्द के समय मस्तिष्क में ढेरों जीव-रासायनिक क्रियाएं होती है । इन्हें अभी तक पूरी तरह से नहीं समझा जा सका है।

कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के डॉ. नील हुघ रस्किन कहतें हैं, 'एक बात तो स्पष्ट है, आधासीसी के संबंध में 1938 में सोचे गए विचार एकदम निराधार हैं।' यह विचार सिरदर्द पर अनुसंधानरत डॉ. हेरॉल्ड वॉल्फ के थे कि मस्तिष्क को दर्द का अहसास नहीं होता और आधे सिर में दर्द के लक्षण तनाव के कारण रक्त वाहिनियों के सिकुड़ने और उनमें सूजन आने से उत्पन्न होते हैं। 'यह विचार उस वक्त की मनोविज्ञान और कोशिका संबंधों पर आधारित धारणा के अनुकूल थे, परन्तु आज यह नितांत गलत लगते हैं।'

मिशीगन सिरदर्द एवं तंत्रिका संस्थान के निदेशक डॉ. जोल सेपर यह मानकर चल रहे हैं कि लोगों के मस्तिष्क में सेरोटोनिन रसायन की गड़बड़ी पैदायशी होती है, अथवा बाद में वे इसे ग्रहण कर लेते हैं। सेरोटोनिन की मात्रा अपर्याप्त होने अथवा असामान्य होने से यह गड़बड़ी हो सकती है, या फिर कुछ असामान्य एन्जाइम सेरोटोनिन को नष्ट करने लगते हैं, तब ऐसा होता है। प्रायः देखा गया है कि लगभग 90 प्रतिशत मरीजों में यह सिरदर्द खानदानी होता है।

सिरदर्द अध्ययन संघ (अमेरिका) के अध्यक्ष डॉ. निनन टी मैथ्यू ने पाया है कि सिरदर्द के सभी प्रमुख लक्षण - दर्द, मूड गड़बड़ाना, मितली या उल्टी की इच्छा, आदि सेरोटोनिन और इसी जैसे 'नौरपिनेफिन' के प्रभावों से संबंधं रखते है।

सिरदर्द और सेरोटोनिन के रिश्ते की बात तब पता चली, जब 15 पीठ-दर्द के मरीजों के इलाज हेतु

उनके मस्तिष्कों में इलेक्ट्रोड लगाए गए और उन्हें सिरदर्द शुरु हो गया, जबकि इससे पहले इसकी शिकायत उन्हें नहीं थी।

डॉ. रस्किन ने इन मरीजों का विस्तृत परीक्षण किया था। इलेक्ट्रोड मस्तिष्क के केन्द्र के पास लगाए गए थे, जहां कि सेरोटोनिन सर्वाधिक सक्रिय रहता है।

आधुनिक यंत्रों द्वारा मस्तिष्क की तरंगो (स्पैक्ट्रम) का अध्ययन भी सिरदर्द के तंत्रिका संबंधों की ही पुष्टि करता है। क्योंकि बीच-बीच में स्क्रीन पर अचानक तीव्र चमक या एकदम काले बिन्दु बनते-बिगड़ते हैं, जो मस्तिष्क की गड़बड़ी को दर्शाते हैं।

कई दर्शकों तक मस्तिष्क तरंगों के स्पैक्ट्रम को रक्त वाहिनियों के सिकुड़ने से जोड़ा जाता रहा है। इसके अनुसार मस्तिष्क के कुछ हिस्सों में रक्त पहुंचना कम हो जाता होगा, तभी सिरदर्द होता है। पर डॉ. ओलेसन ने इस दशक के प्रारम्भ में यह धारणा मिथ्या साबित कर दी। उन्होंने प्रयोगों से साबित किया कि सिरदर्द के समय रक्त वाहिनियों में रक्त की कमी तंत्रिका कोशिकाओं की कार्यविधि सुस्त होने से उपजती है।

हाल ही में हैनरी फोर्ड अस्पताल (डैट्रॉइट) में तंत्रिका - सर्जन डॉ. के. माइकल वैल्थ ने मस्तिष्क की चुम्बकीय तरंगों को जांचने वाली विधि से भी यही निष्कर्ष निकाले हैं। डॉ. वैल्थ के अनुसार, आधासीसी सिरदर्द मस्तिष्क के मध्य भाग में प्रारंभ होता है, जो कि भावनाओं और बुद्धि का क्षेत्र होता है।

डॉ. जोल सेपर ने अध्ययन किया कि सिरदर्द कि प्रमुख दवाएं सेरोटोनिन को प्रभावित कराती हैं।

खैर, परिणाम चाहे जो निकलें, फिलहाल तो मस्तिष्क सेरोटोनिन का रहस्य उजागर होने से नई दवाओं के निर्माण और अनुसंधान में तीव्रता आ गई है।

नरविजय सिंह यादव
(विज्ञान पत्रकार) आई-12, सेक्टर-12,
नोएडा - 201301.

2. वीडियो कैमरा - एक अवलोकन

वर्तमान युग में विज्ञान की बहुत लोक प्रिय देन "वीडियो कैसेट" है। वीडियो कैसेट वीडियो कैमरा द्वारा बनाए जाते हैं। यह सामान्य कैमरे प्रकाश पर आधारित से भिन्न होता है। सामान्य कैमरे की फिल्म पर प्रकाश-सक्रिय पदार्थ सिल्वर ब्रोमाइड अथवा सिल्वर आयोडाइड का लेप होता है, जो कैमरा फोकस किए जाने पर लक्ष्य के विभिन्न भागों से आपतित प्रकाश की तीव्रता के अनुरूप प्रभाव फिल्म के संगत भागों पर डालता है। इस प्रकार लक्ष्य का प्रतिबिंब प्राप्त हो जाता है। वीडियो कैमरे का सिद्धांत इससे एकदम अलग है। यह विद्युत तरंगों को अंकित करता है तथा विद्युत चुंबकीय तरंगों पर आधारित होता है। इसी कारण उससे प्राप्त दृश्य (रेडियो फोटो), टेलिविजन प्रेषक द्वारा प्रसारित किए जाते हैं। किसी भी रेडियो फोटो में अनेकों बिन्दु होते है। प्रत्येक प्रतिबिम्ब अनेकों बिन्दुओं द्वारा बनाई जाती हैं। क्षैतिज रेखाएं प्रत्येक टेलीविजन तंत्र में अलग-2 परिभाषित हैं। प्रारंभ में टेलीविजन में प्रतिबिम्ब -33 रेखाओं में वियोजित होती थी। परंतु यह पाया गया है कि रेखाओं की यह संख्या बहुत कम है। अत: शीघ्र ही विभिन्न राष्ट्रों ने यह संख्या तुरंत स्वविवेकानुसार बढ़ा दी।

अमरीका ने 525 रेखाएं तथा प्राय: संपूर्ण योरोप ने 625 रेखाएं रखीं। ब्रिटेन ने प्रारंभ में 405 रेखाएं मान्य की परंतु तुरंत बाद ही, वह भी 625 रेखाओं पर आ गया। फ्रांसीसी सबसे अलग 819 रेखाएं मानते हैं। भारत भी 625 रेखाओं के मानक को मानता हैं। वास्तव में रखाओं की संख्या का निर्धारण दो प्रमुख कारकों पर निर्भर होता है : (1) कितनी दूरी से टैलिविजन देखा जा रहा है, और (2) नेत्रों का वियोजन कोण जो 10 रेडियन होता है।

वीडियो कैमरा में सर्वप्रथम 'इमेज आर्थिकॉन' का निर्माण हुआ। ये प्रकाश विद्युत सेलों की भांति कार्य करते थे। इनमें बहुत बड़े ट्यूब का उपयोग किया जाता था, जो कि असुविधाजनक था। इन ट्यूब में प्रयुक्त पदार्थ किसी भी प्रकार की ऊर्जा, प्रकाश अथवा ध्वनि को वैद्युत ऊर्जा में परिवर्तित कर

देते थे।

अर्धचालकों का अविष्कार होने के पश्चात 1965 से वीडियो कैमरा में इनका उपयोग होने लगा। अर्धचालकों पर जब प्रकाश आपतित होता है, तब उनकी विद्युत चालकता परिवर्तित हो जाती है। इसी सिद्धांत का उपयोग किया गया। सर्वप्रथम "वीडियोकॉन ट्यूब्स" में अर्धचालक एन्टीमनी सल्फाइड (Sb_2S_3) का उपयोग किया गया। इसके पश्चात कई अन्य अर्धचालकों का उपयोग प्रारंभ हुआ।

कालान्तर में हुए विकास में क्रम वीक्षण तकनीक का उपयोग किया गया। जब किसी लक्ष्य पर इलेक्ट्रॉन पुंज आपतित होता है तो उसमें वैद्युत संकेत एक निश्चित क्रम में उत्पन्न होते हैं। इसे ही क्रमवीक्षण कहा जाता है।

वीडियो कैमरों का एक दुर्गुण है "धूमकेतू पुंछ प्रभाव" यानी पश्चता (लैग)। यदि कैमरे का उपयोग बहुत अधिक प्रकाश में किया जाए तो प्रतिबिंब आगामी फ्रेम में भी आ जाता है। इस कारण इन कैमेरों का उपयोग बहुत तेज प्रकाश में नही करना चाहिए। इससे कैमरा खराब हो जाता है।

इन कैमरो का एक अन्य दुर्गुण था, "उच्च विपर्यास (कन्ट्रास्ट) अनुपात"

विपर्यास अनुपात $=\frac{B1}{B2}$ जहां B_1 तथा B_2 विभिन्न भागों की चमक है। वीडियो कैमरों में यह अनुपात फिल्म कैमेरों की तुलना में कम होना चाहिए। अन्यथा चमकीले भाग की बारीकियां लुप्त हो जाएंगी तथा अंधेरे भाग में नेत्र जितना रव (नॉयज) वियोजित कर सकते हैं, उससे अधिक उत्पन्न होगा।

फिलिप्स द्वारा अविष्कृत "प्लम्बिकॉन" में ये दोनों ही दुर्गुण दूर कर लिए गए। इनमें पश्चता मात्र 10% थी तथा विपर्याय अनुपात भी कम था। परन्तु इनके मूल्य बहुत अधिक थें। इनमें लैड आक्साइड (PbO) का उपयोग किया गया था। इनके पश्चात सिलिकन ट्यूबों का उपयोग प्रारंभ हुआ जिनका उपयोग तेज प्रकाश में किया जा सकता है।

इसके बाद के विकास में ट्यूब-विहीन कैमरे आए। इन्हे सीसीडी कैमरा का नाम दिया। इनमें विपर्यास अनुपात 1:1000 होता है तथा इनमें पश्चता भी नहीं होती है।

वीडियो कैमरा तथा वीडियो टेप, मात्र मनोरंजन के साधन ही नहीं है बल्कि इनका सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपयोग अभिलेख निर्माण तथा साक्ष्य प्रस्तुतीकरण में होता है। इसके द्वारा अपराधियों को पकड़ने में बहुत सुविधा होती है। इसलिये महत्वपूर्ण स्थानों तथा संस्थानों में वीडियो कैमरे लगे रहते है। एक उदाहरण प्रस्तुत है। अभी हाल ही में 15 अप्रैल 1993 के कुछ समाचार पत्रों में एक समाचार छपा था जिसमें अमरीका निवासी भारतीय श्री विश्वनाथ बसु द्वारा अनजानें में ही अपनी पत्नी की हत्या की वीडियो फिल्म बनाने का उल्लेख था। समाचार इस प्रकार था -

"एलीकोट सिटी अमरीका, 14 अप्रैल ए.पी.। श्री विश्वनाथ बसु बिटीया सरीना, गत 8 सितंबर को पहली बार स्कूल जा रही थी। विश्वनाथ इतने खुश थे कि सरीना के स्कूल जाने के इस दृश्य को यादगार बनाने के लिए इसकी वीडियो फिल्म बना रहे थे। सरीना अपनी माँ के साथ कार में अगली सीट पर बैठी थी। तभी उन्होने देखा कि दो युवक उनकी कार की तरफ बढ़ रहे थे। विश्वनाथ के कैमेरे में सरीना के साथ-साथ ये दो युवक भी कैद हो गए। इन युवकों ने श्रीमती बसु को कार से बाहर घसीट लिया और कार चुराकर भागने की कोशिश की। दुर्भाग्य से श्रीमती बसु का हाथ कार की सीट में फंसा रह गया था और वे काफी दूर तक घिसटती चली गई। इस बीच उनकी मृत्यू हो गई। वीडियो टेप की सहायता से कार चोरों को पुलिस ने घटना के लगभग आधे घण्टे के भीतर ही गिरफ्तार कर लिया।

डा. बालगोविन्द जायसवाल
94/16, ईदगाह हिल्स, भोपाल

3. पर्वतों को जड़ें होती हैं ?

यह कथन सत्य है कि पर्वतों कों जड़ें होती हैं, इसे हम एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं। जैसे किसी भी मकान की आधार तली होती है, उसी प्रकार पर्वतों को भी जड़ें हैं।अब प्रश्न है कि पर्वत की जड़

सीमा (Sima) में कितना धंसा हुआ है ? यह मुख्यत: इनकी ऊँचाई अथवा मजबूती पर निर्भर है।

हम पहले कुछ पर्वतों के बारे में जानें। इससे स्पष्ट होगा कि किस कारण से इसकी जड़ सीमा में धँसी हुयी हैं और कितनी नीचे तक हैं ?

पर्वतों के अध्ययन से निम्नलिखित बातें सामने आयी हैं :-

(i) पर्वत प्राय: उथल-पुथल के क्षेत्र अथवा अस्थिर दशा के भाग हैं

(ii) पर्वत की संरचना में फिलहाल मोड़, दरार तथा अन्य विभंजन मिलते है, जो अक्षितिजवत् (Non-Horizontal) परत प्रस्तुत करते है। परन्तु यह परिकल्पना की जाती है कि कभी न कभी ये परतें क्षितिजवत् रुप में निक्षेपित हुई होंगी।

(iii) पर्वतों के क्षेत्र प्राय: समुद्री अवशेष सन्निहित करते हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि इनके निक्षेपित पदार्थ किसी सागर में रहे होंगे।

(iv) पर्वतों के क्षेत्र प्राय: सतहीय संकुचन के भाग हैं, जो यह प्रमाणित करता है कि किसी शक्ति द्वारा क्षितिजवत् परतें मुड़ी हैं।

(v) विश्व में जितनें भी पर्वतक्रम हैं (हिमालय, एण्डीज, आल्पस, राँकी) सभी में तलछटों की मोटाई असामान्य रुप से गहरी है।

इस प्रकार भू-सन्नति में निक्षेपित मलवा जो पहले क्षितिजवत् अवस्था में था, उस पर सतहीय संकुचन पड़ा और वे पर्वतों कें रूप में आये। साथ ही ये पर्वत अपनी संतुलन की स्थिति को प्राप्त करने के अनुसार ही नीचे धंसे हैं। स्टीयर्स महोदय के अनुसार "पृथ्वी के धरातल पर जहाँ कहीं भी संतुलन विद्यमान है समान धरातलीय सतहों के नीचे पदार्थ की मात्रा भी समान होगी।"

धरातल की कुछ भौतिक दशाएं है जैसे चट्टानों के लक्षण, उनका घनत्व, तापक्रम आदि। जिसके बारे में हमें स्पष्ट जानकारी नहीं है। इसलिए इस पर जो भी विचारधाराएँ है वह मुख्य रुप से कल्पना पर ही आधारित हैं।

पर्वतों की जड़ के सम्बन्ध में एयरी होम्स तथा जोली का मत अधिक उपयुक्त लगता है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये जा सकते है:-

(1) यह स्पष्ट है कि भू-पृष्ठ पर विभिन्न प्रकार की चट्टाने बिछी हुई हैं और वे सब अपने घनत्व में भी भिन्न हैं जो भूकम्पीय लहरों से साबित होता है। ये सब चट्टानें स्तम्भों के रुप में विद्यमान नही हैं, बल्की परतों के रुप में देखी जाती हैं।

एयरी ने प्राक्ट के विचारधाराओं को काटते हुए यह बताया कि जिस प्रकार आइसबर्ग का आठ गुणा भाग जल में डूबा हुआ है और एक भाग जल से बाहर रहता है उसी प्रकार पर्वतों की जड़ अर्द्ध तरल सीमा में धंसें हुए है। इस अवस्था में ऊंचे पर्वत बिना सीमा (Sima) मे धंसें हुए नही रह सकते है। अर्थात तात्पर्य यह है कि ऊंचे भू-भागों के नीचे बहुत अधिक गहराई तक हल्के पदार्थ ही होते हैं। जिसमें कम घनत्व वाले पर्वत की जड़ अधिक घनत्व वाले लावा (Lava) में प्रविष्ट होकर उसके आकर्षण को घटा देते है। इसी आधार पर एयरी ने यह बताया कि शोध रेखाओं का हिमालय की ओर आकर्षण गणना से इसलिये कम रहा है कि इन ऊंचे पर्वतों के नीचे हल्के पदार्थ ने अधिक घनत्व वाले द्रव्य पदार्थों को हटा दिया है। जिसके आकर्षण में कुछ न्यूनता आ गयी है। इस धारणा के अनुसार जो भाग अधिक ऊंचा है उसका कम भाग सीमा में डूबा हुआ है। इसको प्रमाणित करने के लिये एयरी ने लकड़ी के विभिन्न आकारों के टुकडों को लेकर पानी में डुबाया। ये टुकड़े अपने आकार के अनुसार संतुलन रखने के लिये भिन्न-भिन्न गहराई तक डूबते हुए उसी अनुपात में बाहर दिखाई देते है (चित्र - 1)।

2) दूसरा तर्क जोली महोदय देते हैं कि समान घनत्व वाले क्षेत्र के नीचे 10 मील मोटी परत होती है जिसके घनत्व में परिवर्तन पाया जाता है। इस 10 मील मोटी परत में कम घनत्व वाले क्षेत्र नीचे डूबे रहते है। तथा अधिक घनत्व वाला भाग भारी पदार्थ से भरा रहता है। इस प्रकार इस असमान घनत्व वाली परतों में विभिन्न घनत्व के भागों का निचला तल एक समान न होकर भिन्न-भिन्न होता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि क्षतिपूर्ती तल को एक रेखा न मानकर एक समूची 10 मील मोटी परत को ही क्षतिपूर्ती मंडल माना है। इस प्रकार

जोली भी एयरी के मत का समर्थन करते हुए कहते हैं कि भूपटल हल्के पदार्थ 'सीयाल' का बना है जिसका औसत घनत्व 3 ग्राम प्रति घन सें.मी. है। इस सीमा पर भू-पृष्ट 'आइसबर्ग' की तरह तैर रहा है (चित्र - 2)।

3) तीसरा तर्क होम्स ने भूकम्पीय लहरों एवं भूकम्प के आधार पर दिया है। 'होम्स' ने भी यह स्वीकार किया है कि ऊंचे उठे भागों की रचना हल्के पदार्थों सें हुई है तथा उन्हें संतुलित रखने के लिए उनका अधिकांश भाग अधिक गहराई तक डूबा रहता है, जिसका घनत्व काफी कम है। 'होम्स' ने बताया कि ऊंचे उठे भाग इसलिये स्थिर हैं क्योंकि उनके नीचे काफी गहराई तक कम घनत्व वाला हल्का पदार्थ पाया जाता है। निचले भागों के नीचे अधिक घनत्व वाले पदार्थ होते हैं।

यहाँ यह एक प्रश्न उठता है कि बर्फ का आठ भाग पानी के नीचे रहता है तथा एक भाग पानी के ऊपर स्थिर रहता है। इस आधार पर हिमालय पर्वत जिसकी ऊंचाई लगभग 29,000 है तो यह स्पष्ट है कि हिमालय पर्वत की जड़ काफी नीचे अर्थात मोटे तौर पर 2 लाख 30 हजार फीट तक नीचे होना चाहिये। अगर इतनी गहराई तक हिमालय पर्वत की जड़ है तो वह ठोस अवस्था में नहीं हो सकता है क्योंकि हम जानते है कि गहराई के अनुसार तापक्रम बदला जाता है। इस आधार पर इतनी गहराई में हिमालय पर्वत की जड़ ठोस नहीं रह सकता है बल्कि वह द्रव की अवस्था में होगा तब इसका उत्तर यही दिया जा सकता है कि अधिक गहराई में पिघलने के बजाए परिवर्तन (Metamorphosed) रुप धारण कर लेता है और वह अधिक कठोर हो जाता है। दूसरी बात यह है कि जो अनुपात बर्फ का पानी के साथ है वह अनुपात कोई जरूरी नही हैं कि 'सियाल और सीमा' का होगा। यह उदाहरण उत्तर कि पुष्टि के लिए भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

इसे एक उदाहरण से और स्पष्ट कर सकते है। जैसे नदी में अगर नाव को तैराना चाहे और यह भी चाहे कि नाव का भीतरी तल भी पानी में नहीं डूबे तो असंभव है। क्योंकि नाव का पानी में संतुलन स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि उसका कुछ भाग पानी में डुबे और नाव पानी में तैर सके। यही बात बर्फ के साथ भी

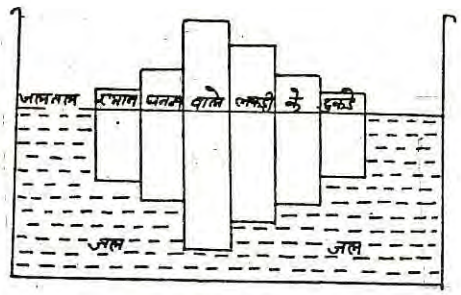

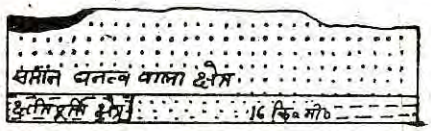

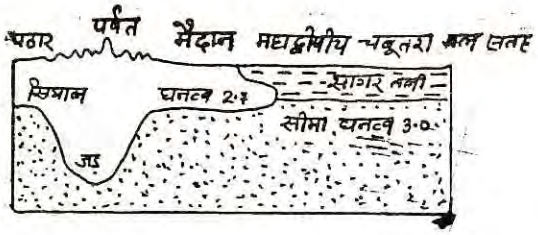

लागू है। जब तक पर्वत की जड़ सीमा (Sima) में नही धंसेगा तो वह स्थिर नहीं रह सकता है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि "पर्वतों को भी जड़े होती हैं।"

डा. राम कृष्ण चौधरी
C/o हरगोविन्द पंडित जसीडीह, देवधर (स.प.),
बिहार,पिन कोड - 814112

4. मीथेन और ग्रीन हाऊस प्रभाव

हमारे पर्यावरण को विगत् कुछ वर्षों से मानवीय हस्तक्षेप के कारण अत्यधिक क्षति पहुँची है। परिणाम स्वरूप हमारी पृथ्वी के औसत तापमान में भी भारी वृद्धि हो गई है। अनियोजित औद्योगिक विकास एवं तीव्रगति से हो रहे वनों के विनाश ने संपूर्ण विश्व

के समक्ष 'ग्रीन हाऊस प्रभाव'की समस्या उत्पन्न कर दी है। जब सूर्य की किरणें पृथ्वी के वातावरण में प्रवेश करती हैं तो कार्बन डाईऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रोजन के ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन आदि गैसें काँच वाले पौधाघरों की तरह कार्य करती हैं यानि ये गैसें सूर्य की किरणों को पृथ्वी तक पहुँचने तो देती हैं परन्तु टकराकर वापिस ऊपर जाने वाली ऊष्मा की कुछ मात्रा को अवशोषित कर लेती हैं। इससे पृथ्वी सामान्य रूप से गुनगुनी रहती है। इसे "ग्रीन हाऊस प्रभाव" कहा गया है।

एक अनुमान है, कि यदि पृथ्वी के तापमान में मात्र 3.6° सें. तक की वृद्धि हो जाए तो आर्कटिक एवं अण्टार्कटिका के विशाल हिमखण्ड पिघल जाएंगे जिससे समुद्र के जल स्तर में 10 इंच से 5 फुट तक की वृद्धि हो सकती है। इस स्थिति में संसार में प्राय: सभी समुद्र तटीय नगर डूब जायेंगे।

ग्रीन हाऊस प्रभाव का मुख्य कारण कार्बन डाईऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रोजन के ऑक्साइड एवं क्लोरोफ्लोरोकार्बन आदि गैसें हैं। जिस कारण अब इन्हें 'ग्रीन हाऊस गैसें' भी कहा जाने लगा है। ओजोन गैस भी परोक्ष रूप से ग्रीन हाऊस प्रभाव उत्पन्न करने में मदद करती है। इन गैसों द्वारा धरती से ज्यादा वाष्पीकरण होता है। यदि वायुमण्डल में जल-वाष्प ज्यादा हो, तो ग्रीन हाऊस प्रभाव और गहराता है। इस तरह यह सिलसिला एक दुष्चक्र की तरह चलता रहता है।

19 वीं शताब्दी के मध्य से वर्तमान समय तक वायुमण्डल में कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा में 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। कार्बन डाईऑक्साइड के बाद दूसरी महत्वपूर्ण पादप गृह गैस मीथेन है। मीथेन गैस की तीव्र विकिरणशीलता के कारण यह अत्यन्त अल्प मात्रा में होते हुए भी कार्बन डाईऑक्साइड की अपेक्षा 21 गुना अधिक ग्रीन हाऊस प्रभाव उत्पन्न कर सकती है। एक किलोग्राम कार्बन डाईऑक्साइड गैस वायुमण्डल में सौ वर्ष तक रहने पर जितनी गर्मी पैदा करेगी, उसे इसकी धरती को गर्म करने की क्षमता मानकर एक इकाई माना जाये, तो उसकी तुलना में मीथेन की इतनी ही मात्रा 21 गुना ज्यादा गर्मी पैदा करती है"।

वर्तमान में मीथेन बढ़ने की सालाना दर लगभग 0.9 प्रतिशत है। अनुमान है कि पिछले 150 सालों में मीथेन का अनुपात 700 भाग प्रति अरब से बढकर सन् 1990 में 1720 भाग तक पहुँच गया है। वातावरण में मीथेन के उत्पादन के प्रमुख स्रोतों को निम्न भागों में बाँटा जा सकता है: - (अ) कृषि, (ब) पशु, (स) जैवीय पदार्थों का सड़ना एवं जलना, (द) प्राकृतिक गैस, इनके अतिरक्त नम-भूमियाँ, समुद्र, ताजा जल, दीमक एवं दलदलों आदि से भी मीथेन उत्पन्न होती है (चित्र-1 एवं तालिका)।

उष्ण कटिबंधीय कृषि में मीथेन गैस सबसे ज्यादा पैदा होती है। कुल का 45 प्रतिशत - कृषि के खाते में डाला गया है। इसमें धान के खेतों से सर्वाधिक मात्रा में मीथेन उत्पन्न होती है। दुनिया का 90 प्रतिशत धान एशिया में पैदा होता है। यही कारण है कि एशिया में मीथेन गैस सबसे ज्यादा पैदा हो रही है। इसके बाद नमभूमियों का स्थान है। ये दोनों मिलकर कुल मीथेन के 40 प्रतिशत से ज्यादा उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं।

मीथेन का एक अन्य प्रमुख स्रोत रोमन्थक पशु है। रोमन्थकों के पाचन तंत्र में मीथेन रूमनीय किण्वीकरण के दौरान बनने वाली कार्बन डाईऑक्साइड के अवकरण से उत्पादित होती जो पशुओं की डकार के साथ वायुमण्डल में विसर्जित होती रहती है। एक अनुमान के अनुसार गाय, भैंस, ऊँट वगैरह प्रति वर्ष 35-55 किलोग्राम मीथेन प्रति पशु के हिसाब से पैदा करते हैं। जबकि बकरी, भेड़ और घोड़े 5-15 किलोग्राम मीथेन प्रति वर्ष छोड़ते हैं। कुल मीथेन उत्पादन का 15 प्रतिशत पशु पैदा करते हैं, जिसका 80% भाग गोपशु व भैंसों द्वारा उत्पादित होता है।

प्राकृतिक गैस के कुओं पर स्थित उच्च भरावपम्पों द्वारा 1-6 प्रतिशत रिसाब होता हैं। प्राकृतिक गैस में 75 प्रतिशत मीथेन होती है और रिसाब द्वारा फैलकर पर्यावरण में मीथेन की सान्द्रता को बढ़ाती है। बायोगैस भी मुख्यत: मीथेन ही होती है। पेट्रोल, डीजल व लकड़ी जलने से 8 प्रतिशत मीथेन उत्पन्न होती है। मीथेन दलदलों से भी उत्पन्न होती है।

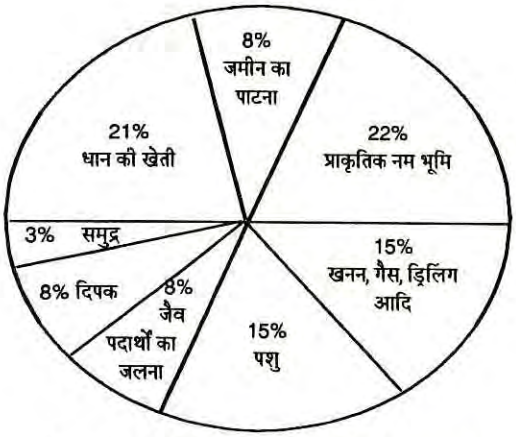

चित्र - 1 मीथेन का विभिन्न स्रोतों से उत्पादन

ग्रीन हाऊस प्रभाव के खतरों से बचने के लिए यह आवश्यक हो जाता है, कि एक तरफ जहाँ जीवाश्म ईंधन के दहन में कमी की जाए वहीं दूसरी ओर वनों का विस्तार एवं पुनर्स्थापना की जाए जिससे ग्रीन हाऊस प्रभाव वाली गैसों का शोषण अधिक से अधिक हो सके।

मीथेन का प्राकृतिक रूप से सर्वाधिक निमज्जन मृदा में मौजूद वातपेक्षी जीवाणुओं द्वारा होता है, जिन्हें मीथेन ऑक्सीकारक जीवाणु (मीथेनोफोरस) कहा जाता है जो कि मृदा की सतह पर पाए जाते हैं। इनके द्वारा उष्ण कटिबंधीय व उप-उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में मीथेन की अनुमानित खपत प्रति वर्ष औसतन 12x106 टन है।

प्राकृतिक निमज्जन के अतिरिक्त यदि पशुओं को संतुलित आहार दिया जाए और इनकी संख्या में नियंत्रण रखा जाए तो कुछ हद तक इनके द्वारा विसर्जित मीथेन पर नियंत्रण किया जा सकता है। पशुओं की संख्या में कमी तभी लायी जा सकती है, जबकि हमारे पशुओं की नस्ल अच्छी हो तथा वह अधिक मात्रा में दुग्ध देते हों।

वृषि क्षेत्र के सुधार के लिए हमें अपने

तालिका

मीथेन का अनुमानित वार्षिक उत्पादन (सन 1990 की इंटरगर्वनमैंटल पैनल ऑफ क्लाइमेट चेंज, आई. पी. सी. सी. की रिपोर्ट के अनुसार)

स्रोत	मीथेन उत्पादन (दस लाख टन/वर्ष)
नमभूमियाँ	100-200
घरेलू पशु	65-100
धान के खेत	25-170
दीमक	10-100
जीवाश्म ईंधन	40-100
लकड़ी जलने से	20-80
समुद्र एवं जल	6-45
भूमि भराव	20-70
मीथेन हाइड्रेट अस्थायीकरण	0-100
कुल अनुमानित	**350-600 दस लाख टन/वर्ष**

परम्परागत यंत्रों में सुधार करना होगा जिससे पेट्रोल, ड़ीजल आदि ईंधनों की खपत में कमी लाई जा सके और मीथेन के उत्पादन में कमी हो सके।

यदि हम वातावरण में मीथेन के बढते स्तर की रोकथाम करने के लिए अभी से सजग नहीं होंगे तो कार्बन डाईऑक्साइड से 21 गुना ज्यादा ग्रीन हाऊस प्रभाव वाली यह गैस क्या गुल खिलायेगी, यह सभी जानते हैं।

डा. गोपाल भारद्वाज,
303 कृषि कुंज, इन्द्रपुरी, नई दिल्ली - 110012

विज्ञान नाटक

परमाणु की आंतरिक दुनिया

डॉ. सत्यनारायण त्रिपाठी
अनुप्रयुक्त रासायनिकी प्रभाग
भा. पं. अ. केंद्र, बंबई - 400 085.

पात्र परिचय :

प्रतिमा कक्षा 8 की छात्रा है। राकेश उसका बड़ा भाई है जो बी.एससी.तृतीय वर्ष, में अध्ययन कर रहा हैं। शेखर इनके पिता हैं जो रसायन शास्त्र मे शोध करने वाले वैज्ञानिक हैं।

प्रतिमा : भैया, आज हमारे साइंस सर ने बताया कि पृथ्वी, पौधे, पहाड़, इर्द गिर्द दिखने वाली हर वस्तु और यहां तक कि हमारा शरीर भी परमाणुओं से बना है। पर मेरी समझ में यह नहीं आया कि यह परमाणु क्या बला है ?

राकेश : ऐसा है कि अगर हम शक्कर का एक दाना लें और उसके टुकड़े करना शुरू करें तो टुकड़े करते करते एक स्थिति ऐसी आयेगी जब कि अगले टुकड़े में मिठास नहीं रह जायेगी । मिठास रहित यह नया टुकड़ा हीं परमाणु कहलाता है ।

प्रतिमा : क्या हम इसे देख सकतें हैं ?

राकेश : नहीं । यह इतना छोटा होता हैं कि न तो हम इसे अपनी आंखों से देख सकते हैं और न सूक्ष्मदर्शी की मदद से ही ।

प्रतिमा : पर भैया जब हम इसे किसी भी तरह देख ही नहीं सकते तो यह कैसे मालूम हुआ कि हर चीज इसी से बनी है ?

राकेश : यह तूने बड़ा टेढ़ा सवाल पूछ लिया है ! यह तो मुझे भी नहीं मालूम । मैंने तो इसके बारे में कभी सोचा ही नहीं । चल पिता जी से पूछते हैं ।
पिताजी ! यह कैसे मालूम हुआ कि हर वस्तु में परमाणु होते है ?

शेखर : ईसा के जन्म से बहुत पहले की बात है। भारत और यूनान (ग्रीस) के बहुत से विचारक थे जो अन्य विषयों के अलावा पदार्थों के बारे में भी बहुत सोचा करते थे। सोचते - सोचते वे इस नतीजे पर पहुंचे कि पृथ्वी, पानी, आग हवा और आकाश ऐसे तत्व है जिनसे दुनिया की सारी चीजें बनी हैं । उनका विचार था कि पृथ्वी, पानी, आग और हवा परमाणु से बने हैं जो न तो नष्ट हो सकता है और न बनाया जा सकता है । इस प्रकार पदार्थ में परमाणु के होने की बात चल पड़ी । यह सही है कि परमाणु का आंखों देखा कोई सबूत न तब था और न आज है ।

राकेश : पिताजी ! भारत का वह कौन सा ग्रंथ है जिसमें पदार्थ की प्रकृति और परमाणु के बारे में सबसे पहला विवरण मिलता है ?

शेखर : उस ग्रंथ का नाम है 'वैशेषिक दर्शन' । इसवे प्रणेता कणाद ऋषि ने (छठवीं सदी ईसा पूर्व) में कहा था कि प्रत्येक द्रव्य के नित्य और अनित्य दो स्वरूप हैं । नित्य स्वरूप को उन्होंने 'अणु' कहा और अविभाज्य बताया। इस अणु से उनका तात्पर्य वही था जो आज के परमाणु से है। इस दर्शन के अनुसार आकाश निरंतर है, सर्वत्र है और सर्वकालिक है तथा इसमें परमाणु नहीं होता ।

राकेश : पिताजी ! क्या कणाद शब्द का संबंध कणों से है ?

शेखर : हां, बेटा ! उनके नाम के बारे में कई धारणाएं हैं। एक तो यह कि वे पदार्थ के कणों यानी परमाणुओं के बारे में सोचते थे । दूसरी बात

यह कि वे अनाज के कण बीन-बीन कर खाते थे और तपस्या करते थे - शायद इसलिए ।

प्रतिमा : पिताजी, क्या यूनान के विचारक भी इसे परमाणु ही कहते थे ?

शेखर : नहीं । यूनानी विचारक इसे 'आटम' कहते थे । 'आ' का अर्थ हैं 'नहीं' और 'टम' का मतलब है काटने योग्य । यानी वह कण जो न काटने योग्य हो और न तोड़ने योग्य ।

राकेश : पिताजी ! आटम या एटम शब्द 'आत्मा' से काफी मिलता जुलता हैं । कहीं इसी से तो नहीं बना हैं ?

शेखर : निश्चित तौर पर तो नहीं कहा जा सकता । पर बात तुम्हारी सोचने लायक है । ग्रीक भाषा का 'आटमस्' और संस्कृत का 'आत्मन्' दोनों समान लगते हैं पर देखना यह होगा कि क्या इन दोनों के अर्थ में भी कोई समानता है । (प्रतिमा की ओर देखकर) बेटी, तुम्हें गीतामृतम् का वह श्लोक याद है क्या जो 'छिन्दन्ति शस्त्राणि' से शुरु होता है ?

प्रतिमा : नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः । न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥ यही न पिताजी ।

शेखर : हां, हां, बेटे यही । भगवान कृष्ण ने अर्जुन को कुरुक्षेत्र के मैदान में गीता का उपदेश देते हुए बताया था कि आत्मा को न तो औजार काट सकते हैं, न अग्नि उसे जला सकता है, न पानी भिगा सकता है और न हवा उसे सुखा सकता है । ग्रीक विचार भी ऐसे ही हैं कि एटम अनश्वर है, अखंडनीय है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता ।

राकेश : इसका मतलब एटम शब्द का 'आत्मा' शब्द से गहरा संबंध है ।

शेखर : हां । अर्थबोध के स्तर पर तो है ही ।

प्रतिमा : पिताजी ! परमाणु की संकल्पना पहले भारत से आयी या ग्रीस से ?

शेखर : यदि यह मान लें कि एटम शब्द हमारे आत्मा शब्द से ही निकला है तो बात पक्की हो जाती है कि परमाणु की संकल्पना भारतीय विचारकों की देन है और सबसे पहले भारत में ही पनपी । पर इस बात को लेकर पश्चिमी विद्वानों में काफी मतभेद है ।

राकेश : इन विद्वानों की क्या राय है ? पिताजी ।

शेखर : प्रोफेसर रिचर्ड गानें की राय है कि परमाणु के बारे में सबसे पहली सोच भारत की है । प्रो. मोबीलो भी इसका समर्थन करते हुए कहते हैं कि भारत का परमाणु-विचार डेमोक्रिटस से सैकड़ों साल पहले का है । बाद में पर्सिया के जरिए यह संकल्पना ग्रीक विचारकों तक पहुंची । डेमोक्रिटस ने 400 वर्ष ईसा पूर्व 'एटम' की धारण दी थी । इसके विपरीत संस्कृत विद्वान प्रो. पॉल ड्यूसन कहते हैं कि भारत और ग्रीस की परमाणु संबंधी सोच अलग-अलग पनपी है ।

राकेश : पिताजी, आपकी राय में परमाणु की सोच पहले कहां शुरू हुई ?

शेखर : भई, मेरा तो निश्चित मत है कि परमाणु की संकल्पना मूलतः भारत की है । पदार्थ के बारे में कणाद की वैशेषिक विचार धारा 600 वर्ष ईसा पूर्व की है जब कि डेमोक्रिटस केवल 400 वर्ष ईसा पूर्व के हैं । अतः परमाणु की संकल्पना विश्व को सबसे पहले भारत ने ही दी है ।

प्रतिमा : पिताजी, हमारे सर ने तो बताया है कि पानी, पृथ्वी और हवा कई तत्वों से मिलकर बने हैं । आपने अभी बताया था कि ये स्वयं ही तत्व हैं । सही क्या है ?

शेखर : तुम्हारे सर ने ठीक कहा है, बेटी । ये स्वयं तत्व नहीं है । हमने विज्ञान में तत्व को जिस प्रकार परिभाषित किया है उसके अनुसार हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन और कैल्सियम आदि ही मूलतत्व हैं ।

प्रतिमा : तत्व की परिभाषा क्या है ?

शेखर : वे पदार्थ जिनमें किसी प्रकार की मिलावट न हो और न उनमें से कोई नया पदार्थ निकाला जा सके तत्व कहलाते हैं । तत्व की यह परिभाषा राबर्ट ब्वायल ने 17वीं सदी में दी थी ।

राकेश : विचारकों ने जिसे परमाणु या एटम बताया था क्या वह डाल्टन के परमाणु से भिन्न है ?

शेखर : नहीं, नहीं । दोनों एक ही हैं । फर्क सिर्फ इतना है कि विचारक अपनी सोच के आधार पर परमाणु के नतीजे पर पहुंचे थे जब कि

डाल्टन गैसों पर किये गये प्रयोंगों से उसी नतीजे पर पहुंचे हैं ।

प्रतिमा : पिताजी, परमाणु की जानकारी से हमें क्या लाभ हुआ ?

शेखर : इस जानकारी से तत्वों के बीच होने वाली क्रिया को समझने में बड़ी आसानी हुई । प्राउस्ट और डाल्टन के नियमों को समझने का आधार मिला ।

प्रतिमा : भैया, यह प्राउस्ट का नियम क्या है ?

राकेश : इसे निश्चित अनुपात का नियम भी कहते हैं। यानी किसी भी यौगिक में दो तत्वों का आपसी अनुपात हमेशा एक ही रहता है । चाहे वह यौगिक किसी भी स्थान से लाया गया हो या किसी भी विधि से बनाया गया हो ।

प्रतिमा : भैया, बात समझ में नहीं आयी ।

राकेश : अच्छा मान लो हमारे पास पानी के चार नमूने हैं जो अमेरिका, रुस, चीन और पाकिस्तान से आये हैं । अब इन सभी में विद्युत गुजार करके हाइड्रोजन और आक्सीजन अलग-अलग इकट्ठी कर लें । मान लिया एक नमूने से मिली हाइड्रोजन 100 मिलीलीटर और आक्सीजन 50 मिलीलीटर है यानी आक्सीजन हाइड्रोजन की आधी है । तो इस प्रकार हम देखेंगे कि हर नमूने से मिली हाइड्रोजन-आक्सीजन का अनुपात वही रहेगा ।

प्रतिमा : क्या यही बात शक्कर और नमक के लिए भी लागू होगी ?

राकेश : बेशक ! किसीभी यौगिक के लिए यह बात सही पायी गयी है । इसीलिए तो इसे नियम मान लिया गया ।

प्रतिमा : पिताजी, गैस के किस गुण से डाल्टन के परमाणु का सबूत मिला ?

शेखर : नाइट्रोजन के आक्साइड लें तो उनमें आक्सीजन की मात्राओं के अनुपात नाइट्रोजन के साथ 1:2:3:4:5 पाये गये । इससे डाल्टन को लगा कि नाइट्रोजन और आक्सीजन के जो हिस्से आपस में जुड़कर आक्साइड बनाते है वे एक निश्चित संख्या में होंगे । यह संख्या क्रिया के दौरान भी नहीं बदलती । इसीलिए निश्चित अनुपात देखने में आता है । इन बुनियादी हिस्सों को डाल्टन ने 'एटम' कहा ।

प्रतिमा : यानी डाल्टन को भी परमाणु का कोई सीधा सबूत नहीं मिला ?

शेखर : हां सो तो है । पर कोरी कल्पना की जगह उन्होंने प्रयोग के परिणामों में परमाणु की छाप देखी । डाल्टन का यह निष्कर्ष तत्वों के व्यवहार और बहस के मेल से निकला है । इसलिए परमाणु के विचार को मजबूती मिली ।

राकेश : पदार्थ के गुणों को समझने में परमाणु बड़े महत्त्व का साबित हुआ है । पर डाल्टन की यह सोच कि परमाणु ही सबसे छोटा कण है, गलत साबित हुआ है ।

शेखर : नहीं, ऐसा नहीं है । डाल्टन के नतीजे को सावधानी से देखना होगा ।चूंकि डाल्टन ने परमाणु के बारे में जो बातें कही हैं वें रासायनिक क्रियाओं से मिले अनुभव पर टिकी हैं । इसलिए परमाणु के अटूट और सबसे छोटा कण होने की बात रासायनिक क्रियाओं तक ही सीमित माननी चाहिए ।

राकेश : पर परमाणु तो परमाणु ही है चाहे वह रासायनिक क्रिया हो अथवा भौतिक !

शेखर : ठीक कह रहे हो पर रासायनिक और अधिकांश भौतिक क्रियाओं में अकेला परमाणु नहीं बल्कि परमाणु के समूह भाग लेते हैं जिनमें परमाणु एक छोटी से छोटी इकाई है । अतः उपरोक्त क्रियाओं के अध्ययन से परमाणु के सामूहिक व्यवहार का ही ज्ञान होता है । दूसरे शब्दों में कहें तो पदार्थ के रासायनिक और भौतिक व्यवहार, परमाणुओं के आपसी संबंधों के प्रतिफल हैं । इसीलिए इन प्रयत्नों से परमाणु की आंतरिक बनावट के बारे में या उसकी अखंडनीयता के विषय में किसी सूचना की अपेक्षा करना गलत ही नहीं, अव्यावहारिक भी है ।

निष्कर्ष यह है कि डाल्टन की परमाणु-धारणा रासायनिक परिप्रेक्ष्य में आज भी सही है ।

प्रतिमा : पिताजी, क्या विज्ञान में परमाणु का विचार डाल्टन से ही शुरू हुआ ?

शेखर : नहीं ! 17 वीं सदी में ही वैज्ञानिक प्रायः इसकी जिक्र करते रहे हैं । राबर्ट ब्वायल और आइज़क न्यूटन जैसे मशहूर वैज्ञानिकों ने भी परमाणु के विचार को अपनाया था । डाल्टन तो बाद में 18 वीं सदी में हुए हैं ।

राकेश : तब फिर साइंस में डाल्टन को परमाणु सिद्धांत का जन्मदाता क्यों माना जाता है ?

शेखर : इसलिए कि डाल्टन ने परमाणु के विचार को एक मजबूत आधार दिया और रासायनिक संयोग के नियमों की व्याख्या की । उन्होंने यह तो बताया ही कि परमाणु तत्व का सबसे छोटा और अविभाज्य कण है । साथ ही यह भी स्पष्ट किया कि एकही तत्व के लिए सारे परमाणु आमाप (साइज), आकार और वजन में एक समान होते हैं ।

प्रतिमा : भैया, क्या सभी तत्वों के परमाणु एक जैसे होते हैं ?

राकेश : नहीं । भिन्न-भिन्न तत्वों के परमाणु भी भिन्न होते हैं । उनके आकार एक जैसे हो सकते हैं पर आमाप और वजन भिन्न होते है ।

प्रतिमा : परमाणु जब इतने छोटे होते हैं कि आंखों से देखे नहीं जा सकते तो उनके साइज के बारे में क्या अनुमान था ?

शेखर : दूसरी सदी ईसा पूर्व में लिखी गयी बुद्ध की जीवनगाथा "ललितविस्तार" में आश्चर्यजनक ढंग से परमाणु की माप का जिक्र मिलता है । परमाणु का आमाप अंगुली की चौड़ाई का 7^{-10} अंका गया था जो कि लगभग 10^{-10} मीटर होता है और यह परमाणु की सही माप है । उस समय यह अनुमान कैसे लगाया गया था इसका कुछ अता-पता नहीं है ।

प्रतिमा : भैया, परमाणु को जब देख नहीं सकते, अलग नहीं कर सकते तो उसको तोलते किस प्रकार हैं ?

राकेश : परमाणु को तोलते नहीं बल्कि उसका वजन ड्यूलांग-पेटिट नियम का प्रयोग करके निकालते हैं ।

प्रतिमा : पर भैया, यह नियम है क्या ?

राकेश : इस नियम के अनुसार परमाणुभार और आपेक्षिक ताप का गुणन फल लगभग 6.4 होता है । जिस तत्व का परमाणु भार निकालना है, यदि उसका आपेक्षिक ताप मालूम हो तो 6.4 में इससे भाग देकर परमाणु भार निकाल सकते हैं ।

शेखर : राकेश ! तुम ठीक कह रहे हो । पर गैसों के घनत्व से भी परमाणु भार निकाले जाते हैं । सच तो यह है कि तत्वों के तुलनात्मक परमाणु भार निकालने की यह विधि बेहतर है । कार्बन-12 के परमाणु भार के बारहवें अंश को इकाई मानकर दूसरे तत्वों के परमाणु भार निकाले गये है ।

प्रतिमा : पिताजी !आक्सीजन का परमाणु भार 16 है । क्या इसका मतलब है कि आक्सीजन का एक परमाणु 16 ग्राम अथवा मिलीग्राम होता है ?

शेखर : नहीं, इसका मतलब है कि आक्सीजन का एक परमाणु कार्बन-12 के एक परमाणु के बारहवें भाग से 16 गुना भारी होता है । परमाणु भार मात्र संख्या होती है । इसकी कोई इकाई नहीं होती ।

राकेश : पिताजी, ड्यूलांग-पेटिट नियम अथवा गैस घनत्व से निकाले गये परमाणु भार क्या बिल्कुल सही होते हैं ?

शेखर : हां, ये तकरीबन सही होते हैं । पर इनसे ज्यादा भरोसेमंद और सही परमाणु भार एवोगैड्रों के सुझावों पर निकाले गये हैं ।

प्रतिमा : पिताजी, तत्वों के परमाणु भार की जानकारी से क्या लाभ हुआ ?

शेखर : क्या लाभ नहीं हुआ । ऐसा पूछो । परमाणु भार के अनुसार तत्वों की तालिका बनीं । यही तालिका मेंडलीव की आज की आवर्तसारणी (पीरियाडिक टेबल की नींव थी । जिसमें उन्होंने परमाणु भार के स्थान पर परमाणु क्रमांक (परमाणु में उपस्थित प्रोटान संख्या) को आधारमाना । इसी तालिका से कई अनजाने तत्वों के बारे में संकेत मिले और बाद में उनकी खोज हुई ।

प्रतिमा : मेंडलीव की पीरियाडिक टेबल से यह तो पता चलता हैं कि आज तक कौन-कौन से तत्व पहचाने गये हैं । पर इससे और कुछ फायदे हैं क्या ?

शेखर : सबसे बड़ा फायदा तो यह है कि इस टेबल में किसी तत्व के स्थान को देखकर ही उसके

तमाम गुणों का बयान किया जा सकता है जैसे उसकी संयोजकता, परमाणु का आमाप (साइज) और गलनांक आदि ।

प्रतिमा : भैया, यह सब तो परमाणु के बारे में रहा । परमाणु के अंदर क्या होता है ?

राकेश : पृथ्वी की तुलना में हम जितने छोटे हैं, यदि परमाणु की तुलना में उससे भी अधिक छोटे हो जायें तो हम परमाणु की अंदरुनी दुनिया की सैर कर सकते हैं । सैर करने पर जो देखेंगे वह हमारे सौरमंडल से काफी मिलता जुलता होगा ।

प्रतिमा : सौरमंडल में तो केंद्र में सूरज होता है और उसके इर्द गिर्द कई कक्षाओं में ग्रह घूम रहे होते हैं । क्या परमाणु में भी सूरज जैसी कोई वस्तु होती है ?

राकेश : नहीं रे बुद्धू !

प्रतिमा : जाओं मैं आपसे बात नहीं करती । पिताजी से पूंछ लूंगी ।

राकेश : मान जा, मेरी प्यारी बहना अब नहीं कहूंगा ।

प्रतिमा : अच्छा तो फिर बताओं सूरज की जगह परमाणु में क्या होता हैं ?

राकेश : परमाणु के केंद्र में कुछ बड़े कण मिलजुल कर बैठे रहते हैं और उनके चारों तरफ कई छोटे-छोटे कण लगातार घूमते रहते हैं । केंद्र में बैठे कणों के समूह को नाभिक कहते हैं ।

प्रतिमा : भैया, परमाणु के अंदर की सैर तो हम कर ही नहीं सकते । इसलिए उसके अंदर क्या है देखने की बात ही नहीं उठती । फिर कैसे पता लगा कि उसके अंदर छोटे-बड़े दो प्रकार के कण होते हैं ?

राकेश : सन् 1897 में जे.जे. थाम्सन के प्रयोग से पता लगा कि परमाणु में अत्यंत छोटे कण होते हैं जिन्हें उन्होंने इलेक्ट्रॉन का नाम दिया । बाद में 1908 में रदर फोर्ड ने अपने प्रयोग में पाया कि केंद्र में इलेक्ट्रॉन से लगभग 2000 गुना भारी कण होते हैं जिन्हें उन्होंने प्रोटान कहा ।

प्रतिमा : इलेक्ट्रॉन और प्रोटान में क्या अंतर हैं ?

राकेश : इलेक्ट्रॉन हल्का और ऋण आवेश वाला कण है । जब कि प्रोटान बहुत भारी होता हैं और उसमें धन आवेश होता है ।

प्रतिमा : यानी परमाणु इलेक्ट्रॉन और प्रोटान से मिलकर बना है ?

राकेश : बिल्कुल सही ।

प्रतिमा : पर भैया, हमारे सर ने तो पढ़ाया है कि ऋण और धन आवेश आपस में एक दूसरे को खींचते हैं ।

राकेश : ठीक तो हैं । इसमें आश्चर्य क्या हैं ?

प्रतिमा : आश्चर्य यह है कि इलेक्ट्रॉन-प्रोटॉन आपसी खिचाव के कारण मिलकर एक क्यों नहीं हो जाते ? अलग-अलग कैसे रहते हैं ?

राकेश : दोनों मिलकर एक इसलिए नहीं होते क्यों कि दोनों निरंतर घूमते रहते है । प्रोटान अपनी जगह पर ही लट्टू की तरह घूमते हैं जब कि इलेक्ट्रॉन प्रोटान के चारों ओर घूमते हैं ।

प्रतिमा : भैया, समान आवेश वाले कण हमेशा एक दूसरे से दूर भागते हैं न ?

राकेश : हां, इसमें संदेह है क्या ?

प्रतिमा : नहीं पर इसका मतलब यह हुआ कि किसी भी परमाणु के केंद्र में दो प्रोटान साथ नहीं रह सकते ।

राकेश : तुम्हारी बात सही है । दो या अधिक प्रोटान साथ नहीं रह सकते । जब तक कि उनके बीच न्यूट्रान न हों ।

प्रतिमा : न्यूट्रान और प्रोटान में क्या फर्क होता हैं ?

राकेश : न्यूट्रान पर किसी प्रकार का आवेश नहीं होता जब कि प्रोटान पर एक इकाई धनावेश होता है । द्रव्यमान दोनों का लगभग बराबर ही होता है ।

प्रतिमा : परमाणु के अंदर न्यूट्रान की जरुरत क्यों पड़ती है ?

राकेश : न्यूट्रान, परमाणु के केंद्र यानी नाभिक में प्रोटोनों के बीच दूरी पैदा करनेवाली शक्ति को घटाता है यानी नाभिक को स्थिर बनाता हैं ।

प्रतिमा : भैया, परमाणु के अंदर नाभिक और इलेक्ट्रॉनों के बीच में क्या होता हैं ?

राकेश : कुछ नहीं ।

प्रतिमा : इसका मतलब कि परमाणु के अंदर बहुत सारी खाली जगह होती है !

राकेश : हां, बिल्कुल सही ।

प्रतिमा : पिताजी, अगर नाभिक में न्यूट्रानों की संख्या प्रोटानों की तुलना में बहुत कम या ज्यादा हो

जाये तो इससे परमाणु पर कोई असर पड़ता है ?

शेखर : वाह बेटी, तुमने तो बहुत अच्छा सवाल पूछा । जब किसी परमाणु में न्यूट्रानों की संख्या बहुत कम या अधिक हो जाती है तो उसका नाभिक अस्थिर हो जाता है यानी नये नाभिक में बदलने की उसकी प्रवृत्ति बढ़ जाती है । नयी स्थिर अवस्था में पहुंचने के लिए वह नाभिक छोटे-छोटे कण बाहर निकालता है । इस प्रकार के परमाणु रेडियोएक्टिव पदार्थों में होते हैं । रेडियो सक्रियता के बारे में तो तुमने चर्चा सुनी ही होगी !

प्रतिमा : पिताजी, बात समझ में नही आयी ।

शेखर : अच्छा ठीक है । एक उदाहरण लेते हैं - पृथ्वी पर बहुतायत में पाया जानेवाला रेडियोएक्टिव तत्व है रेडियम। इसका नाभिक जितनी बार एक इलेक्ट्रॉन या बीटा-कण निकालता है उतनी बार एक नया तत्व बन जाता है । हजारों सालों के बाद यह लेड में बदल जाता है जो कि स्थिर परमाणु वाला तत्व है ।

प्रतिमा : आपने तो बताया कि नाभिक में प्रोटान और न्यूट्रान होते हैं फिर रेडियम के नाभिक से बीटा-कण (इलेक्ट्रॉन) कैसे निकलता है ?

शेखर : यह आश्चर्य केवल तुम्हें ही नही, वैज्ञानिकों को भी होता है । नाभिक से इलेक्ट्रान का निकलना इस बात का सबूत है कि नाभिक उतना सरल है नहीं जितना पहले समझा गया था ।

प्रतिमा : सो तो ठीक है पर मेरे प्रश्न का जवाब नहीं दिया आपने ।

शेखर : अरे हां बात तो अधूरी ही रह गयी । ऐसा देखा गया कि वे परमाणु जिनके नाभिक में 92 से अधिक प्रोटान होते हैं, प्रोटान के बीच होने वाले प्रबल आकर्षण के कारण वे अस्थिर हो जाते हैं और उनमें स्वतः विघटन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है । जैसे मैं पहले बता चुका हूँ कि नाभिक नयी स्थिर अवस्था में आने के प्रयास में कणों का उत्सर्जन करता है । जिस दौरान न्यूट्रान नाभिक के अन्दर प्रोटान में बदलता है तथा ऋणात्मक आवेश वाला बीटा कण बाहर निकल जाता है ।

प्रतिमा : क्या रेडियो एक्टिव परमाणु के नाभिक से बीटा-कण के अलावा भी कण निकलते हैं ?

राकेश : पिताजी, मैं इसका उत्तर दूं ?

शेखर : हां, हां । क्यों नहीं ।

राकेश : रेडियम जैसे रेडियोएक्टिव परमाणु बीटा कण के अलावा भारी अल्फा-कण भी निकालते हैं। इसके अलावा कुछ नाभिक गामा-विकिरण भी देते हैं ।

प्रतिमा : भैया, ये अल्फा कण क्या होते हैं ?

राकेश: हीलियम परमाणु के नाभिक को अल्फा कण कहते हैं ।इसमें दो प्रोटान और दो न्यूट्रान मजबूती से बंधे होते हैं ।

प्रतिमा : पिताजी, सुना है इन अल्फा, बीटा और गामा किरणों का हमारे शरीर पर प्रभाव पड़ता है ।

शेखर : हां, अवश्य । ये तीनों ही मनुष्य के लिए हानिकारक हैं। क्यों कि इनके कारण शरीर की कोशिकाएं मर जाती हैं ।इसलिए इनसे बचना चाहिए ।

राकेश : पिताजी, क्या प्रोटान, न्यूट्रान और इलेक्ट्रॉन के अलावा भी परमाणु में दूसरे कण पाये गये हैं ।

शेखर : ऐसे कई कणों की खोज हुई हैं । इनके नाम हैं - पाज़िट्रान, न्यूट्रिनो, मेसोन, क्वार्क, ग्लुआन आदि । मेसोन की कई किस्में हैं - पाई मेसोन, म्यू-मेसोन आदि ।सच पूछों तो , परमाणु नाभिक के भीतर मौजूद कणों की एक अद्भुत दुनिया अजागर हुयी है नित नए क्षितिज उभर रहे हैं । पर यह एक लंबी कहानी है । इस समय रात के 10.30 बजे रहे हैं । इसलिए हम यह बात चीत यहीं पर रोक देते हैं। कल सुबह मुझे जल्दी उठना हैं ।

राकेश : मुझे भी परीक्षा की तैयारी करनी है ।

प्रतिमा : मुझे तो अपना होम वर्क पूरा करना है ।

शेखर : अच्छा बच्चो, सुबह मिलेंगे । वंदे मातरम् ।

राकेश और प्रतिमा: वंदे मातरम् । पिताजी !

♣♦♣♦

भा. प. अ. केन्द्र में

1. विशिष्ट पौली टेट्रा फ्लोरोइथीलीन का स्वदेशी तौर पर विकास :

विशेष गुणों वाली पी. टी. एफ इ. (पौली टेट्रा फ्लोरोइथीलीन), जिसका उपयोग स्नेहक (लूब्रिकेटिंग) तेलों में पारंपरिक संकलियों (एड्डिटिव्स), जैसे ग्रेफाइट एवं मौलीबिडेनम के स्थान पर किया जा सकता है, को स्वदेशी तौर पर विकसित करने का कार्य लगमग तीन वर्ष पूर्व भापअ केन्द्र एवं हिन्दुस्तान फ्लूरो कार्बन्स लि. ने संयुक्त रूप से प्रारंभ किया था। अभी हाल ही में 19 मई, 1993 को हुए समझौते के अंतर्गत भापअ केंद्र, विकिरण विधि द्वारा इस विशिष्ट पी. टी. एफ इ. पाउडर का निर्माण करेगा।

पी. टी. एफ इ विशिष्ट गुणों वाला इंजीनियरिंग प्लास्टिक है। यह उच्च-ताप पर अत्यधिक स्थिर, मजबूत संक्षारक रसायनिकों के प्रति प्रतिरोधक है। इसके प्रतिघर्षण और न चिपकने वाले विशिष्ट गुणों व आविषालु न होने के कारण से खाद्य संबंधी उद्योगों में इसका अधिक प्रयोग किया जाता है। इसका घर्षण गुणांक काफी कम है अत: शुष्क स्नेहक के रूप में तथा प्लास्टिकों में संकलियों की तरह उपयोग करने दृष्टि से इस पर विस्तृत अध्ययन किये गये है। इसे पीसना (पल्वराइज करना) काफी कठिन है। जब इसे अत्यंत कम ताप (-18^0 से) पर भी चूर्णित किया जाता है तो इसका धीरे धीरे कण-समूहन हो जाता है। अत: विकिरण प्रक्रिया ही कम अणुभार वाले पी. टी. एफ इ. स्नेहक-पाउडरों के उत्पादन की उपयुक्त विधि है।

पी. टी. एफ इ का उपयोग उच्च गुणवत्ता वाले स्नेह को, इंजीनियरिंग प्लास्टिकों और खास तरह के लेपनों व स्याहियों में किया जाता है। रंगहीन होने के कारण कपड़ा उद्योगों की तेज मशीनों के लिए इसके स्नेहक के रूप में उपयोग को वरीयता दी जाती है। इसके स्वदेशी उत्पादन से, इस क्षेत्र में, अब भारत संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, इग्लैंड, जापान और जर्मनी जैसे विकसित राष्ट्रों के समकक्ष आ गया है।

* * *

2. विशिष्ट फैरोएलॉयों का विकास :

भापअ केंद्र ने, 16 अप्रैल 1993 को एक समझौते के द्वारा, कम कार्बन वाले विशिष्ट लौह धातु मिश्रों जैसे FeV, Fe Mo, Fe Nb, Fe B, Fe Ti और Fe Cr आदि बनाने की अल्यूमिनो तापीय अपचयन (Alumino thermic Reduction) विधि की जानकारी मै. श्री पद्मावती एलॉय, फरीदाबाद को हस्तांतरित कर दी। भापअ केंद्र के धात्विकी प्रभाग द्वारा विकसित इस विधि में धातु विशेष के आक्साइड का अल्यूमिनियम या लौह सिलिकॉन द्वारा लौह-आक्साइड या लौह-स्क्रेप और उचित गालक कर्मकों (फ्लक्सिंग एजेंटो) या ताप प्रवर्धकों (हीट बूस्टरों) की उपस्थिति में अपचयन किया जाता है। अपचयन की यह विधि स्वताप उत्पादक है तथा इसमें बाह्य ताप की आवश्यकता नहीं पडती है। इस विधि को बडे पैमाने पर प्रयुक्त करना आसान है।

स्टेनलैस स्टील, औजार-स्टील, अधिक मजबूती वाले मिश्र-स्टील और अन्य संरचना-स्टीलों के निर्माण में इन विशिष्ट लौह- धातु-मिश्रों का उपयोग किया जाता है। देश में स्टील के बढते हुए उत्पादन के साथ-साथ इन विशिष्ट लौह धातु-मिश्रों की मांग भी बढ रही है। स्टील के यांत्रिक गुणों, ताप व संक्षारण प्रतिरोधकता व वेल्डन-गुणों की वृद्धि हेतु सामान्यत: उनमें इन लौह धातु-मिश्रों से युक्त मिश्रकों (एलॉयिंग एलीमेंटों) को डाला जाता है। अभी इन विशिष्ट लौह धातु-मिश्रों की आवश्यकता पूर्ति थोड़े से स्वदेशी उत्पादन और शेष आयात द्वारा की जाती है।

यही तकनीक इससे पूर्व, अन्य चार कंपनियों को दी गई है। भापअ केंद्र द्वारा विकसित इस तकनीक के इस्तेमाल से विदेशी मुद्रा की काफी बचत हो सकेगी।

* * *

3. डायइलेक्ट्रिक पदार्थों की पतली फिल्मों का प्रकाशीय व संरचनात्मक विश्लेषण :

परावैद्युत (डायइलेक्ट्रिक) प्रकाशीय पदार्थों का पतली फिल्मों पर आधारित युक्तियों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। इन युक्तियों का प्रयोग उच्च-शक्ति के लेजर यंत्रों के उपयोगों में किया जाता

है। पर इन पदार्थों के प्रयोग में एक गंभीर समस्या यह है कि इनकी पतली फिल्मों के गुणों और इनके समविष्ट (बल्क) के गुणों में बहुत अंतर होता है, जिससे यंत्रों की अभिकल्पना और विकास के दौरान काफी कठिनाई आती है। अतः यह आवश्यक है कि इन पदार्थों की पतली फिल्मों से जुड़े प्रकाशीय व संरचनात्मक गुणों का अध्ययन विभिन्न लक्षण-चित्रण तकनीकों से किया जाए। यद्यपि ऐसे कार्यों के लिए कई पारंपरिक नैदानिक तकनीकें उपलब्ध हैं, पर उनका प्रयोग इन सब-माइक्रोन वाली पतली फिल्मों के अध्ययन में कठिनाई भरा है। भापअ केन्द्र के लेजर और प्लाज्मा तकनीकी प्रभाग व स्पेक्ट्रोस्कोपी प्रभाग ने मिलकर इन पदार्थों की अतिमहीन फिल्मों के प्रकाशीय स्थिराकों व मणिभीय संरचना के लक्षण - चित्रणन हेतु कई सरल, अविनाशकारी तकनीकों का विकास किया है। इन तकनीकों में स्पेक्ट्रमी प्रकाशमापी तकनीकें, प्रत्यक्ष व परोक्ष बैंड अंतराल विश्लेषण विधियाँ व व्यतिकरण संवृद्धित (इंटरफियरेन्स एन्हान्स्ड) रमन स्पेक्ट्रामिकी सम्मिलित हैं। इन कार्यों को शीघ्रता व सरलता से करने के लिए कई गणनात्मक विधियाँ भी विकसित की गई हैं। सामान्यत: व्यवहार में आनेवाले कुछ प्रकाशीय पदार्थों, जैसे: टाइटेनियम आक्साइड, सिलिकॉन डाइआक्साइड व जिरकोनियम आक्साइड आदि, पर इन तकनीकों का सफल इस्तेमाल किया जा चुका है।

* * *

प्रस्तुति - **डॉ. कैलाश चन्द्र भल्ला**

अन्य समाचार

1. रूस के 75 वर्ष पुराने - शाही परिवार के रहस्य का पर्दाफास :

ब्रिटिश वैज्ञानिकों के निष्कर्ष के अनुसार रूस के एक टिंगवर्ग के जंगलों में लगभग दो वर्ष पूर्व प्राप्त नौ लोगों की एक सामूहिक कब्र, वहाँ के तत्कालीन राज्यच्युत शासक जार निकोलस द्वितीय एवं उसके सम्पूर्ण शाही परिवार की है। वैज्ञानिकों के इस उदघाटन के बाद रूस की 300 वर्ष पुरानी रोमोनोव राजशाही के उस रहस्य का पर्दाफास होगया कि 1917 के वोलशेविक सत्तापरिवर्तन के उपरान्त जार का कोई भी बच्चा जीवित रहा था ।

कहा जाता है कि कब्र उसी स्थान पर है जहाँ जार परिवार को 1917 में कैद करके रखा गया तथा अगले वर्ष 16 जुलाई को कत्ल करके जार, उसकी पत्नी ज़रीना एलेक्सन्ड्रा एवं तीन पुत्रियों ओलगा, मरीयां एवं टाटियाना को वहीं दफ़न कर दिया गया । शेष दो बच्चों अनास्टासिया एवं एलेक्सी को जला दिया गया था ।

वैज्ञानिकों ने एक विशेष फौरैन्सिक विधि का प्रयोग करके कब्र से प्राप्त हड्डियों में से DNA जीन निकाल कर उसे जार के जीवित रिश्तेदारों से प्राप्त खून के DNA जीन से तुलना की । एल्डरमास्टन की सरकारी फौरैन्सिक विज्ञान सेवा प्रयोगशाला के डॉ. पीटर गिल तो दृढ़ निश्चय से वह कब्र जार परिवार की बताते हैं ।

* * *

2. एक वैज्ञानिक तथ्य :

जीवन अनेकों ऐसे विरोधाभासों से भरा पड़ा है जिनका कोई सन्तोष जनक उत्तर विज्ञान के पास नहीं है। कैन्सर विद्युत चुम्बकीय किरणों से होता है, इनका निदान क्या है, जौ अथवा विटामिन का सेवन लाभकारी तथा अण्डों का सेवन हानिप्रद होता है, ठन्डा संलयन (Cold Fusion) शायद कोई वैज्ञानिक चमत्कार है, उल्टे हाथ से काम करने वालों का जीवन या 30 वर्ष से अधिक युवतियों के विवाह की संभावनाएं अधिक हैं, आदि कुछ ऐसे ही प्रश्न हैं जिनका वैज्ञानिक उत्तर अत्यन्त भ्रान्तिपूर्ण है। विडम्बना तो यह कि कंम्प्यूटर के आने से स्थिति और भी शोचनीय हो गयी है। अब स्थिति यह है कि अगर कोई वैज्ञानिक तथ्यों के आधारों पर जीवन स्तर को बदलने को प्रेरित करता है तो उसे गूढ विचार-विमर्श एवं वाद विवादों के उपरान्त भी भुला ही दिया जाता है। टैक्सास के मनोवैज्ञानिक प्रो रेमण्ड ईव के अनुसार "विज्ञान स्वयं में कोई वास्तविकता (तथ्य) न होकर तथ्यों के संकलन एवं आकलन का लगभग आधार मात्र है।" एक दूसरे समाज वैज्ञानिक कनाडा के एलेक्स माइकालोस के अनुसार "जीवन की अन्य विधाओं की भांति, विज्ञान के प्रत्येक तथ्य को पहिले तो भ्रांति पूर्ण ही मानना चाहिये उसके उपरान्त कुछ और"।

इसीलिये वैज्ञानिक तथ्य जीवन में तभी प्रयोग में आ पाता है जब तक कि सभी वैज्ञानिक एकमत से

सहमत न हो जायें ।

* * *

3. पुरुष अधिक दवंग होते है

साधारणतया यह मान्यता है कि पुरुष स्त्रियों की अपेक्षा अधिक दंवग (लड़ाकू स्वभाव के) होते हैं। इसका कारण प्राय:, जैव वैज्ञानिक जिसमें शारीरिक लिंग भेद आता है एवं सामाजिक माना जाता है। परन्तु जर्मनी के डॉ. मैनफ्रेड बोनेवसर के मतानुसार हाल में एथालॉजी एवं मानसिक शरीर विज्ञान (साइको फीजियोलॉजी) सम्बधित परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि यह दवंगता मात्र जैव वैज्ञानिक कारणों से नहीं वरन् मानसिक एवं सामाजिक परिस्थितियों पर अधिक निर्भर करती हैं। यह हारमोनों पर भी प्रत्यक्ष प्रभाव डालती हैं।

* * *

प्रस्तुति : **हरिओम मित्तल**

संगोष्ठी समाचार

"मानव स्वास्थ्य के कुछ आयाम"

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद तथा आयुर्विज्ञान प्रभाग (भापअ केन्द्र) के संयुक्त प्रयासों से भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बंबई में 15 मार्च 1993 को एक दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसका विषय था-मानव स्वास्थ्य के कुछ आयाम । इस संगोष्ठी का संचार माध्यम हिन्दी था । अपने वक्तव्य में मुख्य अतिथि, डॉ. आर चिदम्बरम (केन्द्र के तत्कालीन निदेशक) अध्यक्ष, परमाणु ऊर्जा आयोग ने उच्चस्तरीय अनुसंधान के लिए अच्छे मानव स्वास्थ्य की आवश्यकता पर बल दिया तथा इस प्रकार की संगोष्ठी से वैज्ञानिकों तथा अन्य कर्मचारियों में उनके स्वास्थ्य के प्रति चेतना की आशा व्यक्त की। आयोजन समिति तथा आयुर्विज्ञान प्रभाग के अध्यक्ष डॉ. (श्रीमती) ऊषा देसाई ने वार्ताकारों, संगोष्ठी के सहभागियों एवं उपस्थित जनसमुदाय का स्वागत किया । डॉ. सुनीता शर्मा ने संगोष्ठी का परिचय दिया तथा डॉ. दुर्गाप्रसाद पांडेय ने धन्यवाद ज्ञापन का कार्य किया । उद्घाटन सत्र की प्रमुख वार्ताकार डॉ. (श्रीमती) लेखा पाठक ने हृदयरोग की जटिलताओं को बड़े सरल ढंग से श्रोताओं के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए आहार, आचार तथा विचारों पर नियंत्रण की महत्ता को स्पष्ट किया। संगोष्ठी में आज के जीवन की जटिलताओं और तनावों के परिप्रेक्ष्य में स्वास्थ्य पर होने वाले प्रभाव एवं स्वस्थ जीवन के विभिन्न पक्षों पर आधारित निम्नलिखित विषयों पर चर्चा की गयी : अतिरिक्त चाप की समस्या, हृदय रोग की आधुनिक विचारधारा, तनावपूर्ण जीवन, किशोरावस्था की समस्याएं, क्षयरोग उन्मूलन, विकिरण आधारित नैदानिक विधियां, नैदानिक रेडियो समस्थानिक इत्यादि। व्याधियों के प्रबंधन, निदान एवं मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर आधुनिक अवधारणा एवं दृष्टिकोण भी स्पष्ट किया गया ।

समापन सत्र में होमियोपैथी, आयुर्वेद, आयुर्विज्ञान एवं स्वस्थ जीवन पर एक रोचक परिचर्चा हुयी । इसका मुख्य संदेश यह था कि स्वस्थ जीवन के लिए नियमित आहार, योगाभ्यास, मानिसिक तनावों से बचे रहकर सही समय पर सही तरीके से बीमारियों का निदान व उपचार आवश्यक है, और मनुष्य के जीवन की इस लम्बी दौड़ भाग के बीच संगीत, चित्रकारी, ललित कलाएँ, खेल-कूद, आदि क्रियाकलापों का भी महत्वपूर्ण स्थान है । इन सबके बीच आयुर्विज्ञान हमारे आधुनिक जीवन में इसलिये अहमियत रखता है कि इसके दायरे के भीतर छोटी बड़ी हर तरह की बीमारियों का निदान अवश्य ही ढूंडा जा सकता है और साथ ही शरीर में यदि वास्तव में विकार आया है तो उसे शल्य चिकित्सा से काफी आराम मिल सकता है। होमियोपैथिक दवाईयां बहुत कम मात्रा में दी जाती हैं और ये आण्विक गतिकी स्तर **(Molecular dynamic level)** पर काम करती हैं जिससे शरीर पर उसके दुष्परिणाम कम होते हैं ।

जहां भविष्य का सवाल है, वहां आयुर्विज्ञान की आनुवंशिक इंजीनियरिंग द्वारा आनेवाली पीढ़ियों

को कई लाभ मिलने की संभावनाएं है ।

प्रस्तुति : **डॉ. चित्रा गौड़**
अणुशक्तिनगर डिस्पेंसरी (पूर्व) (भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र)
अणुशक्ति नगर, बम्बई - 400 094

पशु-चिकित्सा विज्ञान की प्रगति में मुक्तेश्वर परिसर का योगदान

भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान की जन्म स्थली मुक्तेश्वर की स्थापना के 100 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में भा.प.चि.अ. संस्थान के मुक्तेश्वर परिसर में दिनांक 28-29 मई, 1993 को 'पशु चिकित्सा विज्ञान की प्रगति में मुक्तेश्वर परिसर का योगदान' विषय पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया । इस गोष्ठी में लगभग 70 पशु चिकित्सा वैज्ञानिकों ने भाग लिया । इस अवसर पर संस्थान के निदेशक डॉ. डी. एस. बालेन ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि मुक्तेश्वर परिसर के उत्थान की ओर समुचित ध्यान दिया जायेगा और यह परिसर भविष्य में पुनः अपनी पुरानी ख्याति को प्राप्त करेगा । डॉ. बालेन ने गोष्ठी के अवसर पर प्रकाशित "स्मारिका और वार्ता सारांश" पुस्तक का विमोचन किया । उपाध्यक्ष डॉ. नेगी ने धन्यवाद ज्ञापन दिया और आगन्तुकों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की ।

इस गोष्ठी में मुख्य तौर पर पशु चिकित्सा विज्ञान तथा पशु विज्ञान के अंतर्गत पशुओं में होनेवाले महारोग रिंडरपेस्ट, मुक्तेश्वर में खुरपका और मुंहपका रोग, पशुओं में अवातजीवी जीवाणु रोग एवं उनके टीके, हिमालय की गोद में पल रहे पशुओं की परजीवी बीमारियां, पशुपोषण, पशु-आहार, पशु प्रजनन और पशुचारा उत्पादन संबंधित विषयों पर चर्चाएं हुयी ।

गोष्ठी की आयोजन समिति के अध्यक्ष डॉ. (कर्नल) राव ने गोष्ठी में भाग लेनेवाले सहभागियों के प्रति कृतज्ञता प्रकट की और संयोजक डॉ. रमेश सोमवंशी ने विविध सत्रों का संचालन किया ।

इस अवसर पर मुक्तेश्वर की पुरानी झलक, मुक्तेश्वर परिसर तथा इज्जतनगर में किए जा रहे अनुसंधान कार्यों, कुमांउनी इतिहास एवं संस्कृति से संबंधित एक प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया ।

इस प्रकार हिंदी में आयोजित वैज्ञानिक गोष्ठियों की श्रृंखला में यह एक और सफल कड़ी कही जा सकती है ।

डॉ. रमेश सोमवंशी
गोष्ठी संयोजक
भा. प. चि. अ. संस्थान,
परिसर मुक्तेश्वर - 263138

कुछ फूल कुछ कांटे

"वैज्ञानिक" का रजत जयंती विशेषांक (भारत में विज्ञान : सफलता के पथ पर) देखा और पढ़ा । भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र अपने प्रकार की अनूठी और सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिक संस्था है लेकिन यह जानकर अधिक प्रसन्नता हुई कि उसके वैज्ञानिक अपने प्रेक्षणों और प्रयोगों में अनुसंधानरत रहते हुए हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद के माध्यम से हिन्दी की भी सेवा कर रहे है । केंद्र के गत 25 वर्षों के बहुआयामी शैक्षिक कार्यकलापों, महत्वपूर्ण जानकारियों, तकनीकी साहित्य तथा बहुक्षेत्रीय उपलब्धियों के परिणामस्वरूप यह विशेषांक ऐतिहासिक दस्तावेज बन गया है । "वैज्ञानिक" का इतने वर्षों से हिंदी त्रैमासिक के रूप में नियमित रूप से प्रकाशित होते रहना अपने में एक उपलब्धि है ।

सामान्य जानकारियों, प्रासंगिक व महत्वपूर्ण लेखों/सारांशों तथा विविध सामग्री वाले तीन खंड़ों में विभाजित विशेषांक पठनीय है । प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, नाभिकीय ऊर्जा, पर्यावरण संरक्षण, अंतरिक्ष कार्यक्रम, कंप्यूटर, प्रतिरक्षा विज्ञान, पदार्थ विज्ञान, कृषि, आयुर्विज्ञान, जीवविज्ञान, पशुधन संवर्धन, समुद्रविज्ञान, नए ऊर्जा स्रोत, खनिज तेल, रसायन, विकिरण इत्यादि विषयों पर क्षेत्र के प्रतिष्ठित विशेषज्ञ वैज्ञानिकों द्वारा उपयोगी लेख लिखे गए हैं । लगभग सभी अधुनातन विषयों को छूने की कोशिश की गई है । सुविचारित संपादकीय आकर्षित करता है और विशेषांक का प्रस्तुतीकरण सुनियोजित ढंग से हुआ है ।

भा. प. अ. केंद्र की हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद के व्यक्तियों के व्यष्टिगत तथा समष्टिगत प्रयास प्रशंसनीय हैं । परिषद को साधुवाद और टीम भावना

से कार्य करने वाली इकाइयों को बधाई।

30-6-93

प्रो. सूरजमान सिंह, अध्यक्ष,
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
वेस्ट ब्लॉक न. VII, रामकृष्ण पुरम,
नई दिल्ली-110 066

"वैज्ञानिक" का रजत जयन्त अँक मिला। पूर्व में भी समय समय पर आपके अंक देखता रहा हूँ। हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद महत्वपूर्ण कार्य करती रही है।

आपकी पत्रिका की सामग्री ज्ञानवर्द्धक है। प्रसन्नता की बात यह है कि पत्रिका की पूरी सामग्री भाषा की दृष्टि से बोधगम्य है।

कुशल संपादन और आकर्षक प्रस्तुति के लिए आपको तथा आपके सहयोगियों को मेरी तथा अकादमी की ओर से हार्दिक बधाई।

कृपया अवगत हों कि म. प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी मध्यप्रदेश शासन के उच्च शिक्षा विभाग का उपक्रम है। अकादमी ने मानविकी, विज्ञान, वाणिज्य आदि से संबंधित 23 विषयों में उच्च शिक्षा हेतु हिन्दी में अब तक 800 पुस्तकें प्रकाशित की हैं।

25-5-93

डॉ. देवेन्द्र दीपक (संचालक)
मध्य प्रदेश हिन्दी अकादमी
रवीन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग, भोपाल-462 003

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद के 25 वर्ष पूर्ण होने पर आप सब को विशेष बधाई। रजत जयन्ती विशेषांक "वैज्ञानिक" का आकर्षक साज सज्जा युक्त तथा सूचनात्मक था। हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद की इन वर्षों में प्रगति सराहनीय है किन्तु उत्कृष्टता की कोई सीमा नहीं होती अत: कुछ सुझाव हैं:

1. परिषद द्वारा आयोजित संगोष्ठियों, सेमिनार व कार्यशाला की विस्तृत रिपोर्ट सभी सदस्यों तक पुस्तिका के रूप में, वार्षिक पुस्तिका के रूप में अथवा "वैज्ञानिक" द्वारा सभी तक प्रेषित की जाय ताकि अनुपस्थित सदस्य इसे अपनी भागीदारी मान सकें।

2. परिषद के कार्यकलापों में पूरे भारत से प्रतिनिधित्व का प्रयास किया जाय ताकि यह विज्ञान में हिंदी की प्रतिष्ठा में इसका सर्वोच्च स्थान हो।

3. नवोदित विज्ञान लेखकों को प्रोत्साहित किया जाय, इसके लिये एक पृष्ठ "वैज्ञानिक" में स्थायी किया जा सकता है।

4. परिषद के सदस्यों के बीच परस्पर विश्वास तथा प्रगति हेतु यथासंभव संपर्क किया जाय, विशेष रूप से ज्वलंत समस्याओं पर खोजपूर्ण रिपोर्टिंग हेतु सदस्यों की मदद ली जाय।

5. ज्वलंत विषयों, दुर्घटनाओं, समस्याओं पर अविलम्ब लेख दिये जांये।

6. पत्रिका में चित्रों तथा दैनिक विज्ञान घटनाओं को यथा स्थान दिया जाये।

7. निसंदेह पत्रिका के लेख सर्वोत्कृष्ट हैं फिर भी इसे 'सभी की' पत्रिका क्यों न बना दिया जाय।

2-6-93

डॉ. अनिल वशिष्ठ (पत्रकार)
घोडाखाल, नैनीताल-26315

सुझावों के लिए धन्यवाद।
इनमें से अधिकांश "परिषद" एवं "वैज्ञानिक" की नीतियों के अंतर्गत हैं। सदस्यों से ज्वलंत विषयों/घटनाओं पर प्रकाशनीय सामग्री सदैव आमंत्रित हैं

— संपादक

आपके द्वारा प्रेषित "वैज्ञानिक" वर्ष 25 अंक —1 (रजत जयंती विशेषांक) की एक प्रति प्राप्त हुई।

पहली बार "वैज्ञानिक" के अंकों से अवगत हुआ। पत्रिका का मैंने अवलोकन किया तथा यह पाया कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के समूचे क्षेत्र की उपलब्धियों को बहुत ही सहजता से सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है।

7-6-93

नरसिंहराम
सहायक निदेशक राजभाषा
पो. आ. - भा. पा. सं. कालोनी, टूटीकोरन, तमिलनाडू

संकलन

अनुक्रमणिका

वर्ष 1980 के "वैज्ञानिक" के अंकों में प्रवेश अंक (1969) से जुला.-सित. 1980 तक छपे लेखों की सूची प्रकाशित की गई थी । उसके बाद के लेखों की सूची इस अंक से प्रकाशित की जा रही है ।

अक्तूबर-दिसम्बर 1980 **12 (4)**

लेख

क्या आईंस्टीन का सपना साकार होगा ? 7
-गोविंद प्रसाद कोठियाल

प्रो. अब्दुस सलाम: एक परिचय 10
-गोविंद प्रसाद कोठियाल

कुक्कुरमुत्ता खाइए और सेहत बनाइए 11
-उमेश चंद्र पांडेय

शैवालों से एंटीबायोटिक्स भी 13
-उमेश चंद्र पांडेय

शैवाल कोषिका: हेटरोसिस्ट 14
-आलोक मिश्र

गर्मसूर्य, ठंडा सूर्य 16
-डॉ. प्रभात कुमार चौहान

फोटोथर्मोग्राफी: तुरंत फोटोग्राफी के लिए एक शुष्क विधि 20
-डॉ. महेश कुमार शर्मा

शैवालों और बैक्टीरिया से खाद 23
-रवि शंकर पांडेय

ड्राइंग रूम की सुंदरता: कांच का मछलीघर 25
- राजीव रंजन प्रसाद

गोरिल्ला, चिंपैंजी और औरंग-उटान 27
- डॉ. एस. एस. हसन

स्तंभ

विज्ञान सत्यकथा 31

यह भी जानिए 33

जो रास्ते बना गये 35

बुद्धि कौशल की परख 38

गोष्ठी समाचार 40

विज्ञान के बढते कदम 4

कुछ फूल, कुछ कांटे 44

जनवरी-जून 1981 **13(1&2)**

लेख

बिना विध्वंस विकास 7
-माधव गाडगील

भारत के नगरों में वायु प्रदूषण 10
-जे. एम. दवे

प्रकृति की सर्वोत्तम देन-पानी 17
-निर्मल डे एवं ता. ना. महादेवन

मानव संरक्षण के लिए बन लगाइए 21
-डॉ. पु. ज. देवरस

प्रदूषण की सदी (कविता) 25
-राम चंद्र मिश्र

'चिपको' आंदोलन-एक परिचय 27
-सुंदर लाल बहुगुणा

ईंधन, जंगल व रेगिस्तान 32
-डॉ. अनिलकुमार गांगुली, मधुकर देसाई एवं वीरेंद्र गुप्ता

गढवाल क्षेत्र में पर्यावरण का विचलन 40
-शरद सिंह नेगी

न्यूक्लीय प्रदूषण: मानव जीवन कितना सुरक्षित ? 42

-डॉ. उमेश चंद्र मिश्र
कूड़े की समस्या और बंबई 46
-डॉ. एफ. अतरवाला
बंबई महानगरपालिका द्वारा जल प्रदूषण निवारण 51
-जी. एफ. खंबाती
पर्यावरण संरक्षण के कुछ संवैधानिक पहलू 55
-डॉ. अनिल कुमार गांगुली
पर्यावरण-प्रदूषण और पौधे 59
-राज नारायण पांडेय
जनसंख्या वृद्धि बनाम प्रदूषण वृद्धि 65
-शंकर रंगनाथन
मानवीय व्यवहार और पर्यावरण प्रदूषण 71
-विमला गौड
संगोष्ठी समाचार 75
जुलाई-सितम्बर 1981 13(3)
लेख
चिकित्सा विज्ञान और विकलांगता 7
-डॉ. ब्रजेंद्र शंकर
हम मना रहे हैं विकलांग वर्ष ! (कविता) 9
-डॉ. अशोक अग्रवाल
आंखों की बीमारियाँ और उनसे बचाव 10
-डॉ. बी. पी. अग्रवाल
बच्चों में मानसिक दुर्बलता 15
-डॉ. (कु.) एम. बी. गांमत
'जयपुर-पैर' बनाम भारत में कृत्रिम अंगों का निर्माण 18
-प्रबोध गोविल
असली न मिले तो नकली खून 21
-जगदीप सक्सेना
पत्तियां हरी, फूल रंगीन क्यों ? 23
-जगदीश चंद्र रंजन
विश्व के कुछ अनोखे वृक्ष 25
-राज नारायण पांडेय
मोती की खेती 28
-राजीव रंजन प्रसाद
भारतीय विज्ञान आज भी अपंग क्यों ? 32
-विमला सिंह
कांच-निर्माण में बालू 35
-अखिलेश्वर तिवारी
बुद्धिमान बच्चों का जन्म बनाम डिकम्प्रेशन विधि 41
-देवेंद्र कुमार शर्मा
स्तंभ
विज्ञान कविता 31
विज्ञान सत्यकथा 37
विज्ञान कविता 39
गणित की पारी 43
विज्ञान के बढते कदम 47
कुछ फूल, कुछ कांटे 48
अक्तूबर-दिसम्बर 1981 13(4)
लेख
मानव सभ्यता और पदार्थ विज्ञान 7
-डॉ. ज्ञानेंद्र प्रसाद तिवारी
स्टेनलेस इस्पात-एक बहु उपयोगी मिश्रधातु 11
-राम निवास आर्य
विशिष्ट सिरामिक पदार्थ 14
-सुजित राय एवं राम प्रसाद
आधुनिक जीवन में प्लास्टिक 18
-एम. एच. राव
न्यूक्लीय पदार्थ 24
-नेमीचंद सोनी एवं राम प्रसाद
धातु से निर्मित अवयवों का शरीर में प्रयोग 29
-डॉ. कृष्ण मोहन गुप्त
सिक्के बनाने में उपयोगी धातुएं 33
-डॉ. प्रभात कुमार चौहान
अतिश्रेष्ठ मिश्रधातुएं (सुपरएलॉयज) 39
-पी. दासगुप्ता

प्राचीन काल में धातुएं 44
-डॉ. शिवगोपाल मिश्र

स्तंभ

विज्ञान कविता 43

नये आविष्कार 48

पुस्तक-समीक्षा 49

कुछ फूल, कुछ कांटे 50

जनवरी-मार्च 1982 14 (1)

लेख

जीवित वस्तुओं की संरचना 7
-डॉ. महेश कुमार शर्मा

कोशिका की क्रियाओं का संचालक: 'क्रोमोसोम' 11
-डॉ. सुबोध कुमार दत्त एवं बी. कु. बनर्जी

प्रकाश संश्लेषण विधि: कुछ नयी जानकारी 17
-डॉ. म. कु. शर्मा

कैन्सर कोशिकाओं की संरचना 22
-डॉ. रमेश सोमवंशी

विकिरण का जीवों पर प्रभाव 25
-सुनील कुमार

संगीत और वनस्पति जगत 40
-राज नारायण पांडेय

टिप्पणियां

कोशिका का शक्तिगृह 25
- निरंकार सिंह

जीवतत्व का स्थानांततरण 28
- देवेंद्र कुमार शर्मा

तंत्रिका तंतुओं में आवेगों का संवहन 30
- अश्वनी कुमार शर्मा

प्रकाश का जीवों पर प्रभाव 31
- वीरेश कुमार बनर्जी

कीट-आकर्षक रसायन 32
- लीला तिवारी एवं विनोद तिवारी

पौधों में आत्मरक्षा की प्रवृत्ति 34
— उमेश चंद्र पांडेय

स्तंभ

वैज्ञानिक हास्य 36

विज्ञान समाचार 44

विज्ञान कविता 37

कुछ फूल और कांटे 48

जुलाई-दिसंबर 1982 14 (3/4)

लेख

ब्रह्मांडीय उत्पत्ति: कुछ वैज्ञानिक विचारधाराएं 7
-डॉ. जयंत नार्लीकर

पदार्थ और जीवन की उत्पत्ति 11
-डॉ. बी. एस. वेंकटवर्धन

खगोल विज्ञान: एक परिचय 15
-रमेश चौधरी

कृष्ण विवर 27
-डॉ. सी. गोपीनाथन

खगोल विज्ञान, आरंभ से मध्य-युग तक 33
-डॉ. प्रभात कुमार चौहान

ग्रहण: कुछ जानकारी 39
-डॉ. राम प्रकाश वर्मा

राशि मंडल और नवग्रह 42
-जे. मोहन कृष्ण

ऊर्जा का हमारा स्रोत सूर्य 55
-नरेंद्र पाल सिंह सिदधू

सौर्य न्यूट्रिनो 59
-डॉ. ब्रजेश श्रीवास्तव

सूर्य: एक ताप-न्यूक्लीय परमाणु-भट्टी 62
-रमाकांत रस्तोगी

ब्रह्मांड में मानव का स्थान 65
-रमाकांत

स्तंभ

विज्ञान सत्य कथा 50

खगोल-विज्ञान पहेली 66

परिषद समाचार 68
कुछ फूल, कुछ कांटे 70

जनवरी-मार्च 1983 15(1)

लेख

पगली संरचनाएं 7
-राजकुमार जैन

बोंसाई: जापान की लोकप्रिय उद्यान कला 13
-नरेश चंद्र 'पुष्प'

विडियो की अगली कडी: विडियो डिस्क 20
-डॉ. महेश कुमार शर्मा

कैंसर और कैंसर उत्पत्तिकारक 25
-सुनील कुमार एवं महेश पोपली

मानव शरीर में लसकोशिकाओं की भूमिका 29
-डॉ. रमेश सोमवंशी

ऊर्जा-संकट और मीथेन 35
-आनद जैन

सर्पविष 37
-डॉ. पांडुरंग भोपले

स्तंभ

परिषद समाचार 4
बुद्धि कौशल की परख 41
कुछ फूल, कूछ कांटे 42

अप्रैल-जून 1983 15(2)

लेख

ऊष्मीय विकिरण से फोटोग्राफी 7
-जगदीश चद्रं मोंगा

बच्चों द्वारा आत्महत्या: एक विश्लेषण 11
-डॉ. महेश कुमार शर्मा

क्या आत्महत्या आनुवांशिक घटना है ? 13
-वीरेश कुमार बनर्जी

बीजरहित फलों का उत्पादन 14
-राजनारायण पांडेय

क्या पौधे भी बुद्धिजीवी होते हैं ? 17
-डॉ. उमेश चंद्र पांडेय

शैवाल: कितने उपयोगी कितने अनुपयोगी ? 19
-डॉ. अजय बल्लभ भट्ट

टिप्पणियां

सुजनन विज्ञान से मानव जाति में सुधार 23
विभिन्नता 24
जीन प्रतिरोपण 26
पेट्रोलियम उगाइए 28
क्या संसार नाशवान है ? 30
एक उपयोगी वनस्पति : बरसेरा 'पेनिसिलेटा' 31
-के. एस. त्यागराजन

वैज्ञानिक वार्ता का प्रस्तुतीकरण :
कुछ ध्यान देने योग्य बातें 33
-डॉ. भगवान कृष्ण गौड़

स्तंभ

विज्ञान-कविता 25
विज्ञान के बढते कदम 35
बुद्धि कौशल की परख 34
समीक्षा 38
कुछ फूल, कुछ कांटे 39

जुलाई-दिसंबर 1983 15 (3/4)

लेख

संपादकीय 5
न्यूक्लीय इंधन चक्र में रेडियो रसायिनी का योगदान 7
-डा. म. व. रमणय्या

रेडियो सक्रियता और उसका परिणाम 11
-डॉ. बृजेश श्रीवास्तव

रेडियो सक्रिय नाभिकों की अर्धायु निर्धारण 15
-श्रीमती मंगला ओक

रेडियो रसायनिकी प्रयोगशाला में कार्य करने लिए आवश्यक नियम -श्रीमती वीणा सागर 17
रेडियो रसायनिकी की कुछ उपयोगी पृथक्करण -विजयकुमार भर्गव 20
अल्पायु रेडियो रसायनों का पृथक्करण -ए. वी. आर रेड्डी 23
हिरोशिमा का विध्वंस -डॉ. प्रभात कुमार चौहान 26
नाभिकीय ईंधन पुनर्संसाधन व प्लूटोनियम की प्राप्ति -वी. वी. रामकृष्ण 31
एक्टिनाइड विलयनों की विकिरण रासायनिकी -डॉ. पा. रा. नटराजन 34
रेडियो-प्रतिरक्षी विश्लेषण विविध -डॉ. आर. एस. मणी एवं आर. ए. पिलै 39
रेडियो तथा न्यूक्लीय रसायनिकी पर त्वरकों का प्रभाव -तरूण दत्त एवं सत्य प्रकाश 41
द्रव्यमान स्पेक्ट्रोमीटर की न्यूक्लीय तकनीक में भूमिका -सुरेश कुमार अग्रवाल एवं हेमचंद्र जैन 43
स्तंभ
बुद्धि कौशल की परख 47
विज्ञान के बढते कदम 49
परिषद समाचार 52

♦♣♣♦

समीक्षा

विज्ञान तृष्णा

वैज्ञानिक जानकारी देने वाली एक नयी त्रैमासिक पत्रिका 'विज्ञान तृष्णा' विज्ञान विचार अकादमी आगरा (उ.प्र.) द्वारा प्रकाशित की जा रही है। इसका प्रथम अंक (जनवरी-मार्च १९९३) अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है । इस पत्रिका के प्रमुख संपादक डॉ. गोपाल भारद्वाज हैं।

प्रवेश अंक में संजोयी सामग्री आम रुचि से संबंद्ध रखती है। हालांकि लेख संक्षिप्त हैं परन्तु जानकारी प्रधान लगते हैं। चित्रों के माधम्य से उन्हें और अधिक सरल एवं रोचक बनाया जा सकता है। साथ ही यदि लेख सारांश/टिप्पणी कुछ आकर्षक तौर पर लेख के प्रारम्भ में दिया जाय तो अच्छा रहेगा।'ज्ञान विज्ञान' तथा 'विज्ञान में आपका ज्ञान' जैसे स्तंभ अच्छे हैं उन्हे सतत रखने का प्रयास होना चाहिए ।

विषय सामग्री का चयन, सम्पादन एवं छपाई कार्य सराहनीय है। छपाई संबंधित त्रुटियां काफी कम है। मुख पृष्ठ को अधिक आकर्षक बनाने के प्रयत्न किए जाने चाहिए। मुख पृष्ठ पर दी गई संख्याओं को भी पत्रिका में अन्यत्र प्रयुक्त संख्याओं की भांति दिया जाय।

विज्ञान की खोजों की जानकारी जन साधारण तक पहुंचना बुद्धिजीवियों की एक नैतिक जिम्मेदारी है। पत्रिका संचार का एक माध्यम है। अतः जानकारी को एकत्र कर केवल प्रकाशित करना काफी नही है। पत्रिका का जनसाधारण तक पहुंचाने का कार्य तथा उनमें उसके लिए रुचि पैदा करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। आशा है इस दिशा में अकादमी प्रयत्नशील होगी।

पत्रिका अपने उद्देश्य में सफल रहे। इस हेतु मेरी अपनी तथा 'वैज्ञानिक' परिवार की ओर से शुभ कामनाएं।

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठिपाल

वैज्ञानिक कविता

" अ प ने आ प "

अपने आप भूख लगती है,
अपने आप नींद आती ।
मानव-मन यें उठी तरंगें,
अपने आप अंत पातीं ॥
मानव चलता जाता है,
और मशीन भी चलती है ।
मानव थक कर सो जाता है
किंतु मशीन नहीं सोती ॥
मानव से गलती होती है,
पर मशीन गलत न होती है ।
मानव तो ही थक सकता है,
पर मशीन कभी न थकती है ॥
अपने आप से चलता पहिया,
उत्पादन नित करता है.....
अपनी निश्चितता के अंदर,
सभी सुनिश्चित करता है ॥
सर्दी-गर्मी से घबराता,
मानव कितना दुःख झेले है ।
किंतु मशीन न विचलित होती,
सर्दी - गर्मी के डर से ....
दिल की धड़कन रहती स्वचलित,
जब तक मानव जीता है...
और मशीन भी रहती स्वचलित,
कभी न विचलित होती है ॥
अपने आप ही चलती है वह,
प्रतिदिन चलती जाती है ॥
जिस मानव में कमियाँ इतनी,
वही मशीन बनाता है ।
अपनी देख-भाल, निष्ठा से,
नित उत्पादन करता है ॥
अपने आप सभी करता है,
अपने आप सभी होता,
उसके दिल में जो आता है,
अपने आप वही करता ॥

रमेश चंद्र सुकुल
नाभिकीय ईंधन संमिश्र, हैदराबाद

सदस्यता आवेदन पत्र

अध्यक्ष,
हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद
पुस्तकालय एवं सूचना प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र
बम्बई 400 085.

प्रिय महोदय,

मैं, हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद (भापअ केन्द्र, बम्बई) का आजीवन/साधारण सदस्य बनने का इच्छुक हूं। मेरा निजी विवरण निम्नलिखित है। मैं सदस्यता शुल्क साथ भेज रहा हूँ। * कृपया मुझे परिषद का आजीवन/साधारण सदस्य बनाने का कष्ट करें।

नाम : _____ आयु : _____
पता कार्यालय : _____ पता निवास : _____
_____
_____
व्यवसाय : _____
हिन्दी की पात्रता : _____
(Qualification)
प्रवीणता : _____
(Specialisation)
विशेष रुचि : _____ हस्ताक्षर : _____
अन्य विवरण : _____ दिनांक : _____

* शुल्क हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद के नाम डिमांड ड्राफ्ट (बम्बई) अथवा भारतीय पोस्टल ऑर्डर द्वारा ही भेजें।

वर्ष 1993-94 एवं 1994-95 हेतु हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद की कार्यकारिणी समिति के चुनाव परिणाम

पदाधिकारी :-

1.	अध्यक्ष	:	डा. बी.ए. दासण्णाचार्य, निदेशक, ठोस अवस्था एवं वर्णक्रमदर्शिकी वर्ग भापअ केंद्र, बंबई - 85
2.	उपाध्यक्ष	:	श्री.एच.सी. कौरा, प्रभागाध्यक्ष, कंप्यूटर प्रभाग, भापअ केंद्र,
3.	सचिव	:	डा.जे.सी. मोंगा, लेसर एवं प्लाजा प्रौद्योगिकी प्रभाग, भापअ, केंद्र
4.	सहसचिव	:	डा. विजय मनचंदा, ईंधन रसायनिकी प्रभाग, भापअ केंद्र
5.	कोषाध्यक्ष	:	श्री. जी.डी. मित्तल, प्रशिक्षण प्रभाग, भापअ, केंद्र

सदस्य :-

1. श्री. ललित कुमार, धातुकी प्रभाग, भापअ केंद्र.
2. डा. एस. के. कुलश्रेष्ठ, रसायनिकी प्रभाग, भापअ केंद्र
3. श्री. बी. के. शाह, परमाणु ईंधन प्रभाग, भापअ केंद्र
4. श्री. अमरनाथ नाकरा, सैद्धांतिक भौतिकी प्रभाग, भापअ केंद्र
5. श्री. मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव, सैद्धांतिक भौतिकी प्रभाग, भापअ केंद्र
6. श्री. जगदीश शर्मा, विकिरण धातुकी प्रभाग, भापअ केंद्र

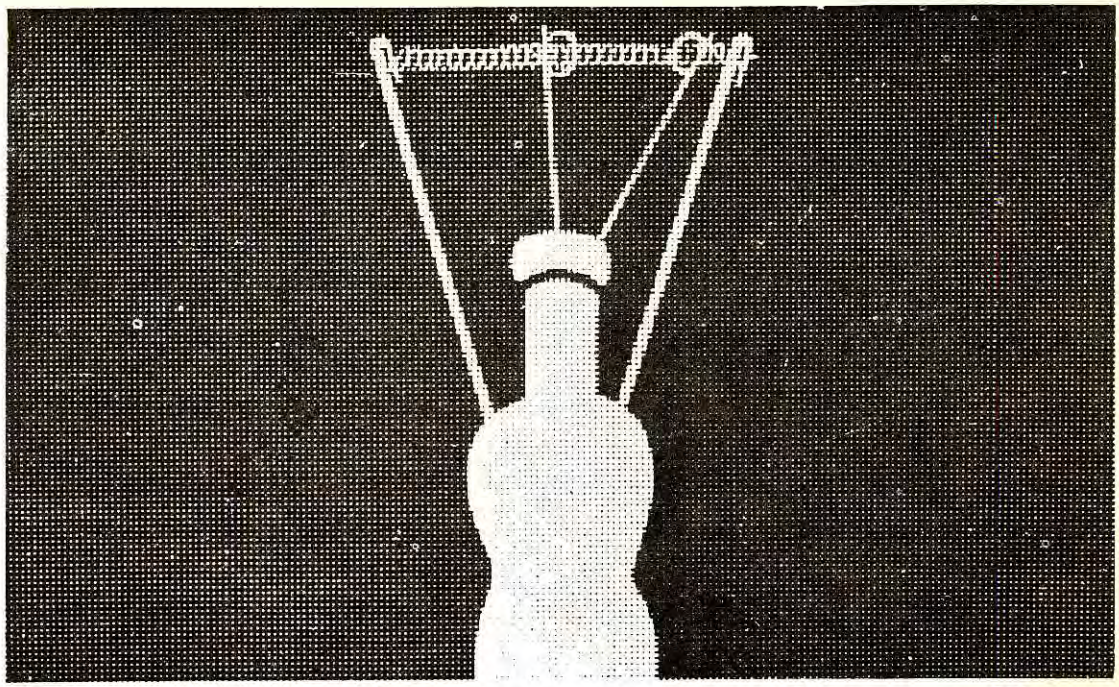

Midhani. Lighting the path to self-reliance in special metals and alloys.

Midhani is India's first and only special alloys plant manufacturing the entire range of special metals and alloys needed by various industries.

For instance, molybdenum, tungsten and high purity nickel for the lamp industry.

The basic production technology has been acquired from reputed foreign organisations like Creusot-Loire and Pechiney-Ugine-Kuhlmann of France and Krupp Kloeckner A   of West Germany. Midhani also has the latest equipment and quality control facilities to ensure that all Midhani alloys meet international standards in quality and performance.

Some of the unique production facilities are the powder metallurgy shop for compacting, sintering, swaging and wire drawing of molybdenum and tungsten products, sophisticated melting and refining furnaces, precision forging, rolling and wire drawing equipment and a central quality control laboratory.

Midhani's product range includes iron, nickel and cobalt based superalloys, special purpose steels, titanium and titanum alloys, electrical and electronic alloys including electrical resistance alloys and powder metallurgy products.

MIDHANI

Mishra Dhatu Nigam Limited

(A Government of India Enterprise)

Kanchanbagh Hyderabad 500 258

Sista's/Midhani/153/84

विकिरण समस्थानिक [रेडियोआइसोटोप]

वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय प्रगति हेतु अनिवार्य साधन

विकिरण एवं आइसोटोप प्रौद्योगिकी बोर्ड (बी आर आई टी) ने देश में विविध रेडियो उत्पादों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में स्वयं को पूर्णतया समर्पित किया है। रेडियोआइसोटोप के उत्पादन एवं अनुप्रयोग हेतु इस क्षेत्र में अनुसंधान की कुछ उत्कृष्ट सुविधाएं ट्रॉंबे में स्थापित की गयी हैं। स्वदेशी अनुसंधान एवं विकास कार्यों पर निर्भर रहते हुए 'ब्रिट' (बी आर आई टी) ने रेडियोआइसोटोप उत्पादों का विस्तृत रुप से विकास किया है एवं देश विदेश के 1000 से भी अधिक संगठनों की आवश्यकताओं की आपूर्ति की है।

कुछ महत्वपूर्ण उत्पाद एवं प्रदत्त सेवाएं इस प्रकार हैं:

- **विकिरण भेषज (रेडियोफार्मास्युटिकल्स) :**
  विभिन्न प्रकार के रोगों के निदान एवं थायराइड रोगों के उपचार हेतु।
- **विकिरण प्रतिरक्षा आमापन (रेडियो इम्यूनो ऐसे) किट्स :**
  हार्मोन्स तथा औषधियों की सूक्ष्म मात्रा के आकलन हेतु।
- **रेडियोरसायन एवं विकिरण स्रोत :**
  अनुसंधान, औद्योगिक अनुप्रयोगों एवं कैन्सर रोगोपचार हेतु।
- **रेडियोग्राफी कैमरे एवं उपसाधन :**
  सांचो तथा वेल्डों के रेडियोग्राफिक निरीक्षण हेतु।
- **गामा किरणन उपस्कर :**
  चिकित्सा उत्पादों के विकिरण निर्जर्मीकरण या खाद्य किरणन हेतु।
- **विकिरण निर्जर्मीकरण सेवा :**
  प्रयोज्य चिकित्सा उत्पादों जैसे, आई.सैट, वी.कैथीटर (मूत्रनलिका), जाली का कपड़ा, रुई, शल्य ब्लेड, दस्ताने, रिक्त पात्र आदि के विकिरण निर्जर्मीकरण हेतु।

कृपया, अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें :

वरिष्ट प्रबंधक एवं विपणन संचालन प्रभारी,

विकिरण एवं आइसोटोप प्रोद्योगिकी बोर्ड (बी आर आई टी)

वि.ना.पुरव मार्ग, देवनार, बम्बई - 400 094.

टेलीफोन : 555 16 76/555 31 45

तार : ब्रिटएटम, बम्बई-94. टेलेक्स : 11 72212 ब्रिट इन्

इंडियन रेअर अर्थ्स लिमिटेड

शेरबानू, छटी मंजिल, **111**, महर्षि कर्वे रोड,
बंबई - **400 020** (भारत)

फोन : 290 914 -15 टेलेक्स : 011 - 83122

तार : रेअर अर्थ बंबई

: हमारे उत्पादन :

इलमेनाइट
रुटाइल
जरकान
जरकॉन फ्लोर (जिरफ्लोर)
जिरकोनियम ऑक्साइड
जिरकोनियम आक्सीक्लोराइड
गारनेट
सिलिमेनाइट
मोनाजाइट

रेअर अर्थ्स क्लोराइड
रेअर अर्थ्स फ्लोराइड
रेअर अर्थ्स ऑक्साइड एवं साल्टस
सीरियम ऑक्साइड
सीरियम हाइड्रेट
सीरियम कार्बोनेट
ट्राइसोडियम फास्फेट (डोडेकाहाइड्रेड)
समेरियम/इट्रियम/गैडोलिनियम सांद्र

थोरियम/सीरियम नाइट्रेट - थोरियम ऑक्साइड
एवं
कृत्रिम रुटाइल

हिंदी-विज्ञान साहित्य परिषद के लिए **डा. गोविंद प्रसाद कोठियाल** द्वारा संपादित तथा
डा. शिव प्रकाश गर्ग द्वारा मानस प्रिन्टेटस और एजंसीस, घाटकोपर, **बम्बई** में मुद्रित व प्रकाशित

वैज्ञानिक (त्रैमासिक) R. No. 18862/70
दिल्ली, नई दिल्ली, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ. प्र. के शिक्षा/विभागों द्वारा स्कूल व कॉलेजों के लिए स्वीकृत

NUCLEAR POWER CORPORATION

STEPPING UP POWER GENERATION FOR GENERATIONS TO COME

Nuclear Energy from the unlimited energy source. Environmentally clean and safe. Indigenously developed and totally self-reliant, to meet the growing energy demand for a better quality of life for our increasing millions.

NPC committed to serving the nation, utilising India's vast nuclear resources for generation of power for generations to come.

NUCLEAR POWER CORPORATION
(A Govt. of India Enterprise)

16th & 20th floor, World Trade Centre 1,
Cuffe Parade, Bombay 400 005.

NPC. Fuelling a powerful future.

CONTOUR ADS-NPC-4